मासिक पत्रिका - वर्ष ०९, अंक ०५

मानमंदिर बरसाना

'वैसाख-ज्येष्ठ' वि. सं. २०८२ (मई २०२५ ई.), श्रीकृष्ण सं. ५२५१

मूल्य १०/-

श्रीराधामान बिहारीलाल, अक्षय तृतीया -चरण दर्शन

अनुक्रमणिका

विषय- सूची	पृष्ठ- संख्या
१ श्रीभगवान् ही शरण्य	०५
२ श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट	०६
३ श्रीसेवाभाव-प्रेरिका 'हनुमान-जयन्ती'	०७
४ रसमण्डप के श्रीठाकुरजी 'अक्षय युगल' का पाटोत्सव	०८
५ बाबाश्री के जीवनी का सार-संक्षिप्त दृश्य	०९
६ सकल कला-गुणनिधि 'श्रीराधारानी'	१६
७ श्रीराधाबाबा के संस्मरण	१९
८ कृपा-करुणा की सिन्धु 'श्रीराधिकारानी'	२३
९ सबसे बड़ी शक्ति 'सद्भावना'	२८
१० राग-द्वेष से रहित संकीर्तन का चमत्कार	३०
११ वास्तविक वीरता 'गौ-भक्ति'	३३

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो ।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो ।
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो ।
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो ।
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो ।
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्यो ।

INSTAAL करें --- PLAY STORE से-----

MAANINI APP

बाबाश्री के सत्संग/कीर्तन/भजन, साहित्य, आदि यहाँ से FREE - DOWNLOAD कर सकते हैं व सुन सकते हैं ।

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपडी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले ।"

* योजना *

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें । हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है ।

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८.०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं ।

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल , प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर , गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

mob. राधाकांत शास्त्री ....9927338666, Website :www.maanmandir.org , (E-mail :info@maanmandir.org)

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें । हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है – **सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ । जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ।।** (श्रीमद्भागवत३/७/४१)
अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता ।

प्रकाशकीय

कौन-सी बात या वस्तु हमारे मन में द्वन्द्व उत्पन्न कर रही है, उसे पहिचान कर दूर करें । द्वन्द्वों से हमेशा डरते रहें । संसार में सबके सामने सब तरह की परिस्थितियाँ आती हैं । दिन है तो रात अवश्य आयेगी । संसार में ऐसा कोई नहीं है, जिसके सामने विपरीत परिस्थितियाँ न आयीं हों । 'भक्त' को किसी भी योनि में जाना पड़े, वह चिंता नहीं करता । राजा बलि गधा बन गये तो वहाँ इन्द्र पहुँच गये । इन्द्र ने पूछा कि बोलो कैसे हो ? राजा बलि ने इन्द्र को जवाब दिया कि मैं तो यहाँ भी भक्ति के आनन्द में स्थित हूँ और तुम अभी भी ईर्ष्या से जल रहे हो । सच्चा भक्त कभी भी देह-गेह की विपरीत परिस्थितियों से घबड़ाता नहीं है; यहाँ तक कि भक्तिरस के आस्वादन हेतु काकभुशुण्डिजी कौआ बने, भगवान् शंकर रुद्र रूप छोड़कर बन्दर (हनुमान) बने । 'भक्ति' भावमयी है, 'भक्त' भाव में कुछ भी कर जाता है । भक्त किसी भी प्रकार की कोई भी चिंता नहीं करता । साधन में द्वन्द्व अवश्य आते हैं । साधक के सामने ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं जो उसकी आस्था को झकझोर देती हैं । देवता स्वयं बाधा पहुँचाते हैं, वे विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न करते रहते हैं परन्तु निष्ठा के साथ उपासना में लगे रहना चाहिए । यह विश्वास रखो कि इष्ट कभी भी रुष्ट नहीं होता । भगवान् बहुत उदार हैं । जैसे आँधी व तूफानों में भी पर्वत की चोटियाँ प्रभावित नहीं होतीं और कूटस्थ की भाँति खड़ी रहती हैं; उसी प्रकार भगवान् का भक्त किसी भी प्रकार की परिस्थिति हो, सभी में दृढ आस्था से खड़ा रहता है । भावमयी भक्ति की सबसे बड़ी पहिचान है – 'सेवा भाव'; स्वयं भगवान् ने सेवा करके यह दिखाया कि सेवा केवल एक साधन ही नहीं है अपितु वह मन के पाप व तापों को धोने वाली एक गंगा है । 'भागीरथी गंगा' तो केवल शारीरिक पाप नष्ट कर सकती है किन्तु 'सेवा-गंगा' शारीरिक-पापों के अलावा मानसी-पापों का भी शमन कर देती है । शुकदेवजीमहाराज ने कहा है –

तैस्तान्यघानि पूयन्ते तपोदानजपादिभिः । नाधर्मजं तद्धृदयं तदपीशाङ्घ्रिसेवया ॥ (श्रीभागवतजी ६/२/१७)

तप, दान, जप आदि से पाप तो नष्ट हो जायेंगे किन्तु पापों ने जो हृदय को मलिन कर दिया है; वह जप, दान, तप आदि के द्वारा भी शुद्ध नहीं हो सकता है, वह केवल भगवद्-भागवतचरणों की सेवा से ही शुद्ध होगा । लेकिन सेवा में सात बातें ग्राह्य और सात त्याज्य बताई गयीं हैं, इनमें से जो सात चीजें ग्राह्य हैं, उनमें सबसे पहली चीज है – १. 'विश्वास', यदि विश्वास नहीं है तो सेवा की नींव समाप्त हो गयी । २. 'अन्तःकरण की पवित्रता' सेवा के लिए दूसरी आवश्यक वस्तु है आत्मशौच; कामना रहित अन्तःकरण ही शुद्ध है । ३. 'गौरव' – छोटी से छोटी सेवा भी गौरव से की जाय । सेवा को छोटी समझकर हिचकना नहीं चाहिए बल्कि गौरव का अनुभव करना चाहिए । ४. 'संयम' – इन्द्रियों का दमन ।
५. 'शुश्रूषा' – सदा सेवा की इच्छा बनी रहे । ६. 'सौहार्द' – प्रेमपूर्वक सेवा की जाए । ७. 'मधुर-भाषण' ।
सात चीजें त्याज्य हैं – १. 'काम' – सेवा में स्वार्थ सम्बन्धी कोई भी कामना नहीं होनी चाहिए । २. 'दम्भ' – दिखावा नहीं होना चाहिए । ३. 'द्वेष' – द्वेष नहीं होना चाहिए । ४. 'लोभ' – किसी प्रलोभ से सेवा नहीं करना चाहिए । सच्चा सेवक वही है जो अपने सब सुख और लोभ को छोड़कर स्वामी की सेवा करे; इसलिए सेवा में लोभ भी बहुत बड़ा दोष है । ५. 'मद' – सेवा करने के बाद मन में अहंकार नहीं होना चाहिए । ६. 'अघ' – पाप । ७. 'प्रमाद' – सेवा में मनुष्य को कभी भी आलस नहीं करना चाहिए । भक्त को जितना लाभ सेवा से होता है, उतना अन्य किसी साधन से नहीं होता । अन्य साधन तो 'अहं' को जाग्रत कर देते हैं और सेवा से 'अहं' नष्ट हो जाता है । बिना सेवा किये न 'अहं' नष्ट होगा और न हृदय शुद्ध होगा । हर प्राणी स्वामी बनना चाहता है, सेवक कोई नहीं बनना चाहता । इसलिए भगवान् की विशेष कृपा जिस पर होती है, वही सेवा कर पाता है । 'सेवा करना' ही वास्तविक भक्ति है ।

कार्यकारी अध्यक्ष

राधाकान्त शास्त्री
श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीभगवान् ही शरण्य

प्रह्लादजी ने कहा है – **'बालस्य नेह शरणं पितरौ नृसिंह'** लोग कहते हैं कि माता-पिता ही बालक की शरण हैं किन्तु ऐसा नहीं है । माता-पिता बालक की शरण न कभी थे, न हैं और न कभी हो सकते हैं । माता-पिता मर जाते हैं, फिर भी बालक का पालन-पोषण हो जाता है । इसका उदाहरण है कुछ साल पहले की बात है, रूस में एक बहुत बड़ा भूकम्प आया था । भूकम्प के प्रभाव से मकान गिर जाते हैं और लोग उनके नीचे दबकर मर जाते हैं, बहुत दिनों तक जमीन की खुदाई चलती रहती है । जब खुदाई की गयी तो पता चला कि एक मकान गिर गया था, उसकी खुदाई करने पर चौदह दिन के बाद मलबे के नीचे से एक छोटा-सा बच्चा जीवित मिला । सबको आश्चर्य हुआ कि बच्चे के माँ-बाप मर गये, कितने ही लोग मर गये किन्तु यह बच्चा चौदह दिनों तक जीवित कैसे रहा ? बच्चा अपनी मृतक माँ के वक्षःस्थल पर पड़ा रहा । माँ के शरीर से जो खून बहता रहा, उसको चाटकर यह बच्चा चौदह दिनों तक जीवित रहा । चौदह दिन बाद जब मकान खोदा गया तो माँ तो मर गयी थी लेकिन उसका बच्चा जीवित रहा । इन सब घटनाओं को सुनकर पता चलता है कि प्रह्लादजी ने जो कहा है, वह बिल्कुल सत्य है – **'बालस्य नेह शरणं पितरौ नृसिंह नार्तस्य चागदमुदन्वति मज्जतो नौः ।'** हे नृसिंह ! माँ-बाप कभी भी बालक की शरण न थे, न हैं । बीमार की शरण भी भगवान् हैं, दवाई नहीं है । बीमारी होने पर यदि भगवान् रक्षा न करें तो चाहे कितनी ही बढ़िया दवा खा लो, फिर भी मृत्यु हो जाएगी । बीमारी के सम्बन्ध में भी एक सच्ची घटना है कि एक व्यक्ति जालन्धर रोग का रोगी था । इस रोग के कारण उसके शरीर में बहुत अधिक कष्ट था । उसकी सेवा करने वाला कोई नहीं था । रोग के कारण उसे उठना-बैठना भी मुश्किल था । ऐसी स्थिति में उसने सोचा कि कहीं जाकर आत्महत्या कर लेनी चाहिए; उस समय वर्षा बहुत हुई थी । उस व्यक्ति ने सोचा कि लुढ़कते-लुढ़कते किसी गड्ढे में कूदकर मर जाना चाहिए । वह लुढ़कता हुआ कहीं जा रहा था । इतने में उसने देखा कि कहीं से एक काला नाग आया । वहाँ पास में ही किसी छोटे से गड्ढे में पानी भरा था । उस नाग ने उस गड्ढे में अपना सारा विष उगल दिया तो उसके तीक्ष्ण विष के प्रभाव से सारा पानी खौलने लगा । विष उगलने के बाद वह जहरीला साँप चला गया । उस व्यक्ति ने सोचा कि इस गड्ढे का पानी खौल रहा है । मुझे यही जहरीला पानी पी लेना चाहिए, इससे मेरी मृत्यु हो जाएगी । ऐसा विचारकर वह व्यक्ति गया और उस गड्ढे के जहरीले पानी को पी गया । उस जहरीले पानी को पीने से उस व्यक्ति को बहुत अधिक कै-दस्त होने लगे । इसके बाद वह मूर्च्छित हो गया । दूसरे-तीसरे दिन उसको होश आया तो उसका जालन्धर रोग पूरी तरह समाप्त हो गया, उस रोग के सारे कीटाणु नष्ट हो गये, उस रोग का सारा पानी बाहर निकल गया । इस तरह से भगवान् की कृपा से उसके लिए जहर अमृत बन गया । इसीलिए प्रह्लादजी कहते हैं – 'नार्तस्य चागदम्' 'अगद' माने दवा अर्थात् दवा भी तो भगवान् ही है । इसलिए बीमार की शरण दवा नहीं हो सकती है । 'उदन्वति मज्जतो नौः' – समुद्र या नदी में डूबने वाले के लिए नाव शरण नहीं है । भगवान् ही आश्रय हैं । एक बार समुद्र में जहाज के डूबने से पचासों लोग डूबे थे । उनमें से चार लोग बच गये । उनको पता नहीं लगा कि कैसे बच गये ? ये सब प्रह्लादजी का अनुभव है, इसीलिए वे कहते हैं कि शरण तो एकमात्र भगवान् ही हैं । इसे लोग समझ नहीं पाते । **'तप्तस्य तत्प्रतिविधिर्य इहाञ्जसेष्टस्तावद् विभो तनुभृतां त्वदुपेक्षितानाम् ।'** (श्रीभागवतजी ७/९/१९) इसीलिए भगवान् की शरण लेने के लिए लोग अपने परिवार को छोड़ते हैं, धन-सम्पत्ति का त्याग करते हैं और भगवान् के प्रेम में अपने आप को पूरी तरह डुबो देते हैं, अपना सारा कुटुम्ब-संसार डुबो देते हैं, उसे छोड़ देते हैं लेकिन आज तक कभी उनकी दुर्गति नहीं हुई और न किसी ने उनको संसार के प्रेम में उछलते देखा । वृन्दावन के रसिक सन्त श्रीललितकिशोरीजी का इस सम्बन्ध में एक पद है, जिसका अभिप्राय है कि भगवान् के ऐसे प्रेमी फिर कभी संसार में नहीं भटकते; वे तो निरन्तर, सदा-सर्वदा के लिए भगवान् के प्रेम में डूब जाते हैं –

'ललित किसोरी जुगल इश्क में, बहुतों का घर ढलते देखा । डूबा प्रेमसिन्धु का हमने कोई नहीं उछलते देखा ॥'

अध्यक्ष

रामजीलाल शास्त्री,

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीभक्ति-धर्म संस्थापक 'रामावतार'

श्रीरामजन्म-महोत्सव सनातन हिन्दू-संस्कृति का बहुत बड़ा महापर्व है । त्रेतायुग में चैत्र शुक्ल नवमी तिथि को मध्यान्ह १२ बजे अभिजित मुहूर्त में भगवान् श्रीराम का जन्म हुआ था – **'मध्य दिवस अति सीत न घामा । पावन काल लोक बिश्रामा ॥'** (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – १९१) भगवान् राम का जन्म चराचर सृष्टि को परम शान्ति देने वाला था, आज भी जो भक्तजन रामजन्म का उत्सव मनाते हुए रामजी की भावनाओं व उपदेशों का पालन करते हैं, उनका जीवन हर तरह से मंगलमय होता है । जीवों के हृदय में रमने वाले को 'राम' कहते हैं; जो विशुद्ध भक्ति करते हैं, उनके हृदय में 'राम' रमते हैं । 'रामजन्म' जीवन में अति आवश्यक है अर्थात् रामजी की मर्यादाएँ व कर्त्तव्यनिष्ठा जैसे सद्गुणों का होना संसार में बहुत जरूरी है । भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के मर्यादामय आदर्श जीवन को जाने बिना श्रीकृष्ण की प्रेमलीलाओं को समझना कठिन है । इसीलिये श्रीशुकदेवजी ने श्रीभागवतजी की कथा कहते समय रसिक श्रोता श्रीपरीक्षितजी को पहले रामकथा सुनाई फिर कृष्ण-कथा को कहा । विशेष रहस्य व रस की बात है कि श्रीराम के वंश में ही श्रीराधारानी का अवतरण हुआ है । प्रभु श्रीराम अति उदार-गम्भीर-धर्म-प्रेमरस के स्वरूप हैं, उन समस्त दिव्य सद्गुणों की मूल स्रोत सिन्धु स्वरूपा 'श्रीराधिकारानी' हैं क्योंकि चाहे श्रीरामावतार हो या श्रीकृष्णावतार हो अथवा जितने भी श्रीभगवान् के अवतार हैं, उन सभी अवतारों में जो अलौकिक प्रेमरसानन्द की अनुभूति हुई, उसके मूल में श्रीजी की कृपा-करुणा ही समाहित थी ।

श्रीरामजन्म-महोत्सव (चैत्र, शुक्ल, नवमी '६ अप्रैल २०२५')

रसिया तर्ज – कैसे जाऊँ रे हाँ - कैसे जाऊँ रे हाँ, बाबा नन्द जू के द्वार सोच रहे वसुदेव जी ।

(१) शुभ अवसर है - शुभ अवसर है, जनम श्रीराम कौ,
मुदित मन महादेवजी ।
अति उमंग में भरे हैं शिवजी, रामोत्सव कौ आतुर हैं ।
भुशुण्डि काक को संग में लैके, आने कौ अति व्याकुल हैं ॥
करने दरसन महादेवजी ।
बाल रूप से अति सुख पावैं, प्रीति विशेष निराली है ।
भाव भगति सत्संगहि पाई, सत्संगी ही साथी हैं ॥
भक्तन्ह भावन महादेवजी ।
इष्ट की दरस-पिपासा रहती, अवतारन्ह में आवैं हैं ।
भावमयी श्रीभक्ति है मिलती, शरणागत ही पावैं हैं ॥
आशु-करन महादेवजी ।
राम भाव जब मन में आवै, राम जनम कौ सार है ।
रामचरित्र से प्रेम समझते, जो प्रवेश का द्वार है ॥
श्रीप्रेम-देन महादेवजी ।
रामजन्म ने प्रेम दिखाया, मर्यादा में बाँधा है ।
प्रगट रूप से कृष्णजन्म में, प्रेमी को ही साधा है ॥
दिग्दर्शन महादेवजी ।
राम दरस के मोहित ऋषि-मुनि, बनकर गोपी आयी हैं ।
ब्याही-कुँवारी सभी प्रेम की, मारी ब्रज में आयी हैं ॥
रस-देवन महादेवजी ।
जीव-जन्तु सब सृष्टि के राम, सूर्यवंश में राधा हैं ।
रामशरन से राधारस कौ, पावत सार अगाधा हैं ॥
रास-मिलन महादेवजी ।

रसिया तर्ज – कन्हैया प्यारे आय जइयो, बरसानो मेरौ गाँव ।

(३) लला रामजी ने जनम लियौ, बधाई-मंगल मिल गाओ ।
जब से राम लला हैं प्रगटे, सहजहि आनन्द आय;
ऋषि मुनि सब संत सुखी हैं, लीला शिशु की पाय,
इच्छा पूरन मनहि कियौ, बधाई-मंगल मिल गाओ ।
पुरजन-परिजन-भावुकजन सब, नाचैं-गावैं आय;
लला राम की जय-जयकार, मंगल-वाद्य बजाय,
अमंगल सब दूर कियौ, बधाई-मंगल मिल गाओ ।
मन्दिर राम से बनी भूमिका, धर्म-ध्वजा फहराय;
निज स्वरूप में हिन्दू जागे, संस्कृति सच्ची आय,
मिलजुल सफल कियौ, बधाई-मंगल मिल गाओ ।
रामभाव के उदय से भक्ति, जन-जन प्रेम समाय;
भारत का गौरव है प्रगटा, सत्य सनातन छाय,
सिद्ध संतन्ह हि कियौ, बधाई-मंगल मिल गाओ ।

श्रीसेवाभाव-प्रेरिका 'हनुमान-जयन्ती'

श्रीहनुमान-जयन्ती की मंगलमयी तिथि में (चैत्र, शुक्ल, पूर्णिमा को) श्रीहनुमानजीमहाराज का माता अंजनी के गर्भ से 'जन्म' हुआ था । आपके अवतरण ने भक्ति-ज्ञान-वैराग्य के वास्तविक भाव 'सेवा-भावना' की किरणों से सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित किया है । 'हनुमान' शब्द का अर्थ बहुत ही विशेष है – 'जिसने अपने मान-सम्मान, अहंकार आदि का जीवन में बिल्कुल हनन (विनाश) कर दिया है अर्थात् जो शरीर आदि की मोह-ममता से रहित होकर हर तरह की सेवा करने को तैयार रहे, उसे 'हनुमान' कहते हैं । 'हनुमान' नाम सुनते ही मन में सेवा की सद्भावनाएँ जागने लगती हैं । 'श्रीहनुमानजीमहाराज' सेवा के लिए सूर्य के समान तेजस्वी थे; और हो भी क्यों न, जो गुरु-स्वरूप 'श्रीसूर्यदेव' से ही वेद-वेदांग, शास्त्र-पुराणों के यथार्थ ज्ञान में पारंगत हुए थे ।श्रीहनुमानजी के सेवा-भाव का कुछ अंश जिसके अन्दर आ जाएगा, वह भगवान् व भक्तों की सेवा करने में अत्यन्त गौरव की अनुभूति करेगा; वही सच्चा प्रेमी भक्त बनता है । सच्चा सेवक ही वास्तविक प्रेमी बनता है । इसीलिये कहा गया है – **जेहि शरीर रति राम सों, सो आदरहिं सुजान । रुद्र देह तजि नेह बस, बानर भए हनुमान ॥** प्रेम-वश्यता में सेवा करने के लिए श्रीहनुमानजी ने वानर रूप धारण किया क्योंकि प्रेमी का स्वभाव होता है कि हर तरह से सेवा करके प्रेमास्पद को प्रसन्न रखना । स्वामी की प्रसन्नता में ही सेवक की प्रसन्नता होती है । श्रीभगवान् की हर समय सेवा करने की लालसा-उत्कंठा-तत्परता के कारण ही श्रीहनुमंतलालजी ने रामावतार व कृष्णावतार में सेवक-सखा-सखी इत्यादि भावों की सेवा में विशेष भूमिका निभाई है । इसलिए भावना-जगत में जन-सामान्य के लिए भी आप एक विशेष आदर्श स्वरूप हैं, आपकी कृपा से सभी लोगों को सेवा करने की सच्ची लगन प्राप्त हो जाती है, जिससे भावमयी भक्ति का उदय सहज ही हो जाता है । 'दास्य-भक्ति के आचार्य 'श्रीहनुमानजी महाराज की ....जय हो ।' श्रीहनुमानजीमहाराज सबसे बड़े सेवक हैं श्रीभगवान् के, जो सर्वात्मभाव से समर्पित अपने स्वामी का अनन्य भक्त होता है, उसका अपने स्वामी की प्रिय से प्रिय वस्तु-लीला इत्यादि में भी सहज अधिकार हो जाता है; ऐसे ही श्रीहनुमन्तलालजी को भी अपने स्वामी की सरस लीलाओं (श्रीरामलीला व श्रीकृष्णलीलाओं) में पूर्ण प्रवेश प्राप्त हुआ है, चाहे वह सखा-सखी-दास्य इत्यादि किसी भी भाव की लीला क्यों न हो । अर्थात् कथनाशय है कि न केवल प्रभु श्रीराम की लीलाओं से ही भरा हुआ है हनुमानजी का चरित्र अपितु श्रीकृष्णावतार के समय में भी बराबर भाग लिया है; फिर ब्रजलीला का आनन्द लेने के लिए ब्रज में जन्म होना अनिवार्य था श्रीहनुमानजी का । वर्तमान में कामाँ से २२ किमी. की दूरी पर स्थित पहाड़ी, पहाड़ी से ६ किमी. दूरी पर पश्चिम-दक्षिण की ओर स्थित अञ्जनीधाम में अञ्जनीकुण्ड पर जन्म लेकर शैशव से ही शुरू कर दी कृष्ण के साथ कपि-क्रीड़ा । श्रीमद्वल्लभाचार्यजी ने सुबोधिनी जी में स्पष्ट भी कर दिया – **'मर्कान् भोक्ष्यन् विभजति'** (श्रीभागवतजी १०/८/२९) श्लोक की टीका में लिखा है कि – **'तेहि पूर्वे रामावतार भक्ताः'** ये वानर कौन हैं ? रामभक्त अञ्जनानन्दन हनुमान व उनके साथी ही हैं, जिनमें अञ्जनानन्दन तो विशेष स्नेह के भाजन हैं श्रीकृष्ण के, अनेक बार लीला का आनन्द अकेले ही लेते हैं । ब्रजवासियों द्वारा सुनी हुई कथायें हैं जो बिल्कुल सही ही हैं – गोकुल के निकट वन मार्ग में एक "हनुमान हठीलो" प्रसिद्ध दर्शनीय स्थल है । यहाँ की लीला ख्याति है कि जब यशोदा मैया लाला को भोर में ताजा नवनीत देती तो एक वानर हठपूर्वक कान्हा के निकट बैठ जाता और उनके हाथ से, मुख से गिरे सीथ-कणों को उठा-उठाकर प्रसन्नतापूर्वक खाता था, मैया बार-बार मना करती, भगाती भी किन्तु यह वानर कहाँ मानने वाला, मानो इसका तो जन्म ही कान्हा की सीथ पर अधिकार जमाने के लिए हुआ था । मैया ने इस हठी वानर शिशु का नाम ही "हठीलो हनुमान" रख दिया । कन्हैया के जागने की देर नहीं होती और यह नन्द-द्वार पर आकर बैठ जाता । आज भी "हठीलो हनुमान" के दर्शन प्राप्त होते हैं । स्वभाववश कृष्ण की वानर-भालुओं से प्रीति-रीति विचित्र ही है – **'वानर-भालु चपल पसु पामर, नाथ तहाँ रति मानी ॥ ऐसी हरि करत दास पर प्रीति ।'** **(तुलसी विनय पत्रिका - ९८)**

इसी प्रकार वृन्दावन के समीप "लुटेरिया हनुमान" प्रसिद्ध हैं । कान्हा की आज्ञा से ये वृन्दावन के द्वार पर पूर्ण सजगता के साथ प्रतिदिन विराज जाते एवं मथुरा से वृन्दावन की ओर आने वाली दधि बेचने वाली गोपियों का अता-पता अपने समूह नायक श्रीकृष्ण को देते । बेचारी गोपियों का सब गोरस लुटवा देते अतः गोपियों ने इन्हें "लुटेरिया हनुमान" की प्रसिद्धि दे दी । वस्तुतः ये श्रीकृष्ण की तरह केवल गोरस की ही चोरी नहीं करते, भावुक भक्तों का मानना है कि ये 'लुटेरिया हनुमान' चित्त के दूषित विकारों को लूटते, लुटवाते हैं । ये लीला-स्थल आज भी दर्शनीय है । श्रीहनुमानजी रुद्रावतार हैं फिर चाहे रामावतार हो अथवा कृष्णावतार, शिवागमन के बिना किसी भी लीला का शुभारम्भ नहीं होता है । श्रीमहादेवजी कभी तो स्वयं ही आ जाते हैं जोगी आदि का रूप बनाकर अथवा कभी हनुमानजी के रूप में आकर मधुर लीला-रस का उपभोग करते हैं । अनेक बार अकेले लीलानन्द लेते देखे गए हैं – **उलूखलाङ्घ्रेरुपरि व्यवस्थितं मर्काय कामं ददतं शिचि स्थितम् ।** (श्रीभागवतजी १०/९/८) इस श्लोक में 'मर्काय' एकवचन होने से यहाँ अकेले अञ्जनानन्दन ही हैं । कान्हा ने जब केवल जानुबल से चलना सीखा था, तब से ही इस कपि से मैत्री हो गयी थी ।

शुकदेवजी कहते हैं – **'श्रृङ्ग्यग्निदंष्ट्र्यसिजलद्विजकण्टकेभ्यः क्रीडापरावतिचलौ स्वसुतौ निषेद्धुम् ।** (श्रीभागवतजी १०/८/२५) 'दंष्ट्रिणः' – दाँत वाले जीवों में श्रीजीवगोस्वामीजी ने वैष्णवतोषिणी में 'वानरादयः' वानर इत्यादि ही ग्रहण किये हैं । अतः श्रीहनुमानजी व उनकी वानरी-सेना का ब्रजलीला में बहुत बड़ा महत्त्व है । ब्रज में जन्म लेने से ब्रजवासी स्वरूप 'श्रीहनुमानजीमहाराज' की विशेष कृपा से ब्रजवास व ब्रजप्रेम सहज ही मिल जाता है ।

रसिया तर्ज – सबसौं सुन्दर है बरसानो, ब्रज में राधारानी कौ ।

अद्भुत आदर्श है भक्तिभाव, जग में श्रीहनुमान कौ ॥
शुक्ल चैत्र पूर्णिमा है आई,
धाम अञ्जनी खुशियाँ छाईं,
अञ्जनिनन्दन भए सुखदाई,
देवन देख शौर्य बालक कौ, राख्यौ वर में मान कौ ।
वानर रूप धर्यौ सेवा हित,
रामकाज में प्रेम समाहित,
रहे ब्रह्मचर्य से प्रसन्नचित,
तन-मन-वचन कीन्ह प्रभु-सेवा, छोड़ देह-अभिमान कौ ।
सब सृष्टि में इष्ट देखते,
सत्ता श्रीप्रभु ही की समझते,
नित नाम-रूप-लीला ही गाते,
कथा-कीर्तन-प्रेम विलक्षण, सुने सदा गुणगान कौ ।
सेवा की शिक्षा है मिलती,
श्रीरामकृष्णभक्ति है आती,
शुद्ध प्रेममय मति है होती,
दिखा दिया सम्मुख जन-जन कौ, कर सेवा सम्मान कौ ।
अनुपम दासी-दास श्रीराम,
सखा-सखी बने श्रीश्याम,
देते ब्रज-ब्रजरस अभिराम,
ब्रजवास-इच्छा मन पूरन, करते जन कल्यान कौ ॥

रसमण्डप के श्रीठाकुरजी 'अक्षय युगल' का पाटोत्सव

अक्षय तृतीया की परम पुण्यमयी तिथि में जो सत्कार्य किया जाता है, उसका फल अक्षय हो जाता है अर्थात् सद्भावनाओं से निष्काम भावपूर्वक की गई सेवा साक्षात् श्रीभगवान् ही स्वीकार करते हैं; उस सर्वात्मसमर्पित जीव का काल-कर्म-स्वभाव श्रीइष्ट को समर्पित हो जाता है, जिसका सच्चा निष्कर्ष (परिणाम) श्रीभगवान् की आराधना में बदल जाता है । क्योंकि श्रीभगवान् को आराधना अति प्रिय है, भगवान् जिस पर सच्ची कृपा-करुणा करते हैं, उसे आराधना की निष्ठा दे देते हैं । समस्त धर्म-कर्मों का असली फल 'श्रीराधामाधव की आराधना करना' ही है । वर्षों से श्रीगह्वरवनधाम में हो रही परम पूज्य श्रीबाबामहाराज की आराधना का परिणाम है कि श्रीठाकुरजी भी उस आराधना का नित्य निरन्तर आस्वादन करने के लिए 'श्रीअक्षय युगल' के रूप में प्रकट हो गए हैं । आज (अक्षय तृतीया को) श्रीअक्षययुगल का पाटोत्सव (आविर्भाव-महोत्सव) है अर्थात् ये सहज ही अनुभव होने लगता है कि 'आराधना की महिमा' सबसे अधिक है, अतः हम ये भी कह सकते हैं कि आज 'आराधना की महिमा का प्राकट्य-महोत्सव' है ।

बधाई-गायन

१. रसिया तर्ज – जनम लियौ राधा ने, कीरति के बधाई आज ।

जनम युगल अक्षय कौ मंगल है बधाई आज ।
प्रेमी भक्तन काज प्रगट हों, जिनकी भक्ति अनन्य ।
गोपिन के आराधन आवैं, सखियन सम न अन्य ॥
सब धामन में धाम निराला, ब्रज सम और न कोय ।
बरसाने की महिमा अनुपम, श्रीगहवरवन धन्य ॥
आराधन से युगल रीझते, जो कोइ सहज बुलाय ।
धामाराधन दौड़े आवैं, रस ही मन में सुहाय ॥
युगों-युगों में रस की महिमा, कलि में भई विशेष ।
रस-आराधन सार है भैया, रहे न कुछ अवसेस ॥
नित्य धाम में सहचरि गावैं, भावुक रसिक अनेक ।
अनुकम्पा से प्रगट है करतीं, सखियन की है टेक ॥
बाबाश्री कौ ब्रज-आराधन, अद्‌भुत अनुपम होय ।
श्रीगह्वर-महिमा है प्रगटी, जन-जन मंगल होय ॥
रसमय आराधन कौ देखन, आवैं रसिक अनेक ।
ठाकुरश्री सहजहिं हैं प्रगटे, अक्षय युगल हैं एक ॥

(२) रसिया-तर्ज – राधा जनम बधाई होय, अरि होय मेरी मैया ।

अक्षय युगल बधाई होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ॥
आराधन कर ब्रजबाला, नाचैं-गावैं बेहाला;
आनन्द अद्‌भुत होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
बाबाश्री की सन्निधि, बरसावै नित रसनिधि;
श्रीकृपा से वर्षण होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
ऐसौ रस-आराधन, अद्‌भुत-अनुपम है साधन;
नित गह्वरवन में होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
बिन दर्शन व्याकुल होते, हो आनन्दित रस-गोते;
प्रगटे रस-लोलुप हैं दोय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
श्रीरसमण्डप में रहते, गोपिन को रस हैं चखते;
अक्षय युगल कहें सब कोय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
हैं लखते प्रेम की झाँकी, जयकार करें या रस की;
प्रमुदित रोम-रोम सब होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
ब्रजमण्डल की महिमा, बरसाने से है गरिमा;
रस श्रीगह्वरवन से होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ।
तीज है अक्षय आवै, रसिकन कौ मन हुलसावै;
आराधन-महिमा होय, अरि होय सखि-सहचरियाँ ॥

(३) रसिया-तर्ज – नाचूँगी-नाचूँगी-नाचूँगी आज राधा बधाई नाचूँगी ।

गाऊँगी-गाऊँगी नाचूँगी, युगल अक्षय बधाई नाचूँगी ॥
अक्षय युगल कौ खुश करवै कूँ,
नाच-नाच के रिझाऊँगी ।
इष्ट के सुख में सुख मानूँगी,
गाइ-गाइ के नचाऊँगी ।
नृत्य-गान से युगल रीझते,
घुँघरू की घोर सुनाऊँगी ।
जन्मदिवस है आनन्ददायी,
रसिकन मोद बढ़ाऊँगी ।
पाटोत्सव संतन्ह मन भायौ,
श्रीसेवा कर आऊँगी ।

बाबाश्री के जीवनी का सार-संक्षिप्त दृश्य

श्रीब्रज-वृन्दावन धाम की प्रेम माधुरी को समेटे श्रीयमुनामहारानी जब संगम तीर्थ प्रयाग पहुँचती तो उसकी छवि को देखकर एक तेजस्वी कैशोरावस्था को प्राप्त बालक भावुक हो उठता । रात्रि को सबसे छिपकर यमुनाजी के सुन्दर बलुआ घाट पहुँच जाता और किसी नाव पर बैठकर इस छटा को पूरी रात निहारता । वह सोचता कि यह वही यमुना है, जो ब्रज में श्रीकृष्ण के चरणकमलों को छूकर आई है, जिसने श्रीजी के भी चरणकमलों को एवं उनके आँचल का स्पर्श किया है । श्रीयमुना से आने वाली इस हवा में श्रीराधामाधव के दिव्य प्रेमरस की सुगन्ध समाहित है । यह शीतल तो है किन्तु मेरे हृदय के ताप को प्रज्वलित करती है । ब्रज की याद नेत्रों को भिगो देती । वह अपने घर लौट तो जाता पर अपने ठौर की पुकार बनी रहती । लहरों के स्पर्श से संस्कारों का सैलाब उमड़ पड़ता, संस्कार जो मानो प्रकृति ने संजोकर रखा हो, अपने बालक पर लुटाने के लिए । इस कृपालहर की धारा के स्रोत भगवान् भोलेनाथ स्वयं बने थे, जब सन् १९३८ के पौष मास कृष्णपक्ष सप्तमी को मध्याह्न १२

बजे इस दिव्य बालक का आविर्भाव एक भारद्वाज गोत्रीय ऋग्वेदी सम्पन्न ब्राह्मण कुल में हुआ, जिन्हें हम 'बाबाश्री' अथवा 'श्रीबाबामहाराज' के नाम से पुकारते हैं । बाबा का जन्म किसी दैवी चमत्कार से कम नहीं था । सन्तों की आज्ञा से उनके माता-पिता ने 'श्रीरामेश्वरम् तीर्थ' की यात्रा की थी । तीन दिनों तक अन्न-जल त्यागकर शिवाराधन में लीन रहे, पुत्र-कामेष्टि महायज्ञ किया । तृतीय रात्रि को भगवान् शंकर ने संकेत दिए । पिताजी 'सीलौन वर्तमान श्रीलंका' से शिवलिंग लेकर आये और झूसी के 'श्रीपरमानन्द गिरि आश्रम' में स्थापना की । माताश्री एवं पिताश्री एक वर्ष तक केवल फलाहार पर रहे, फलस्वरूप एक 'अलौकिक विभूति' का एक विलक्षण महापुरुष के रूप में प्राकट्य से 'तीर्थराज प्रयाग' कृतार्थ हो उठा । घर में बारह दिनों तक उत्सव मनाया गया । 'श्रीरामेश्वर महादेव' की कृपा 'श्रीरामेश्वरप्रसाद शुक्ल' के रूप में विभूषित हुई । जिन्हें माताजी 'राम' कहकर पुकारतीं, उन्हें वर्तमान जगत अनन्तश्रीविभूषित, ब्रज के मुकुटमणि सन्त 'श्रीरमेशबाबा' के नाम से जानने का सौभाग्य प्राप्त करता है । बाबाश्री के पिताजी श्रीबलदेवप्रसादशुक्ल करुणा एवं कृपा के मूर्तिमान स्वरूप, सन्त स्वभावी, परम गोभक्त थे । सन्तों में उनकी खूब निष्ठा रही । बाबाश्री की माताजी श्रीमती हेमेश्वरीदेवी परम विदुषी, परम भक्ता, परम तपस्विनी, भजनशील एवं सेवापरायणा सती स्त्री थीं । बाबाश्री के जन्म के पूर्व से ही परिवार को सन्तों का संग प्राप्त होता रहा । पिताजी वेदान्त मण्डली में बैठते थे । बाबा की तीन वर्ष की आयु रही होगी, जब मदनमोहन-बाग में भजन का कार्यक्रम था; उस कार्यक्रम में भारतरत्न पण्डित मदनमोहनमालवीयजी भी पधारे थे, उनका शुक्ल भगवान् से अच्छा परिचय था । जहाँ अन्य बालक बाहर खेल रहे थे, वहीं बाबाश्री ध्यानपूर्वक कीर्तन सुन रहे थे । मालवीयजी की दृष्टि उस बालक पर पड़ी, उन्होंने उसको गोद में बैठा लिया और पूछा – 'तुमको भजन करना आता है ?' बालक बाबा बोले – हाँ.....और वे **'शिव शिव शम्भो, हर हर महादेव'** गाने लगे । मालवीयजी ने कहा – 'शुक्लजी ! यह बालक तो अलौकिक है, यह तो सन्त बनेगा ।'

"होनहार बिरवान के होत चीकने पात ।" बाबा की दीदीजी उच्च शैक्षणिक योग्यता को प्राप्त, मेधावी एवं बहुमुखी प्रतिभा की धनी थीं; उन्होंने शास्त्रीय संगीत में 'विशारद' किया था । 'प्रयाग संगीत समिति' की ओर से 'कृष्णकुञ्ज' में दीदी के संग बाबा कीर्तन करने जाते थे । आठ वर्ष की आयु में बाबा ने वहाँ मीराबाई का पद सुना – **'मैं तो गिरधर के घर जाऊँ ।'** इस पद ने बाबा के हृदय को आधीन कर लिया । भावनात्मक पदों की ओर बाबा की रुचि बढ़ी । इस बीच बाबाश्री की प्रतिभा को पहचानकर दीदीजी ने उनको संगीत सिखाना आरम्भ किया, दो वर्ष तक उन्हें अनेक राग सिखाये । दस वर्ष की आयु में उन्हें 'प्रयाग संगीत समिति' में प्रवेश कराया, जहाँ से आगे चलकर बाबा ने 'संगीत प्रभाकर' में टॉप किया । भारत के प्रख्यात गायक डी. वी. पलुस्कर उन्हें मुम्बई ले जाना चाहते थे, पर बाबा ने मना कर दिया । बाबा अब शास्त्रीय पद्धति से महापुरुषों के पदों का गान करने लगे थे । नवीन भक्ति-लता को उन्होंने रागों के द्वारा सींचना शुरू कर दिया था । मेधावी होने के कारण बाबा ने हाईस्कूल की पढ़ाई १२ वर्ष की आयु में ही उत्तीर्ण कर ली थी । फोटोग्राफी और चित्रकला में भी उनकी निपुणता रही । वे जो कुछ भी करते, पूरी लगन के साथ करते थे । शुद्ध आचरणशील जीवन, निरन्तर नाम संकीर्तन एवं सन्तों के संग ने मार्मिक पदों के रहस्य उद्‌घाटित कर दिए । भीतर वैराग्य की अग्नि धधक उठी और किसी सम्बन्धी की बारात में अवसर पाकर भाग चले चित्रकूट के जंगलों में परन्तु परिजनों के कष्ट का विचारकर चार दिनों में ही पुनः लौट आये । आपने आगे 'इण्टर की पढ़ाई' पूर्ण की और यूनिवर्सिटी में प्रवेश लिया । सबने विचार किया कि यदि वैवाहिक बन्धन में नहीं बाँधा गया तो यह लड़का साधु हो जाएगा । उन्होंने बाबा से लड़की को देखने का आग्रह किया परन्तु अपने आराध्य से मिलने की उत्कण्ठा के आगे बाबा को सम्पूर्ण जगत् नीरस लगता । उन्होंने कह दिया कि मैंने अपना मन प्रभु के चरणों में समर्पित कर दिया है । मुझे अब संसार में नहीं जाना है । उन्हें अब व्यावहारिक बन्धन अच्छे नहीं लगते थे । घर में अब उनका मन नहीं लग रहा था । प्रयाग में किसी कीर्तन के कार्यक्रम में इनकी भेंट श्रीरामबाबा से हुई; उन्होंने बाबाश्री को गुलाब का फूल दिया और कहा – 'बेटा ! यह मानव-शरीर भी एक फूल ही है, जिसका विकास युवावस्था में होता है । इसकी सार्थकता इसी में है कि इसे श्रीहरि की सेवा में लगा दिया जाए, सांसारिक

भोगों से तो यह फूल मुरझा जाता है तो क्या तुम मुरझाया हुआ फूल अपने इष्ट को चढ़ाओगे ?' न जाने कौन-सी धुन सवार हुई कि बाबा बिना किसी को बताये सन् १९५३ में घर को छोड़ आये । अपने इष्ट की प्राप्ति की चाह में वे चित्रकूट के जंगलों में आँख बन्दकर दौड़ते । इस दिव्य पागलपन में उन्हें अपने शरीर का भान नहीं रहता था । एक प्रेमी, जिसने अपने प्रेमास्पद पर सब कुछ लुटा दिया हो, वह भला क्या विचार करेगा ? कभी चित्रकूट में मन्दाकिनी का जल पीकर रह जाते तो कभी भूखे ही जंगलों में भटकते रहते । न दिन का पता रहता, न रात्रि का । एक बार अँधेरे में शेर ने बहुत दूर तक इनका पीछा किया, जब वे 'राधे-राधे' कहते तो वह शेर रुक जाता । कभी ठौर मिल जाता, तो कभी वर्षा में बैठने को भी जगह नहीं मिलती थी । भगवान् श्रीराम ने जहाँ विराध राक्षस को मारा था, वह धरती फोड़कर भीतर घुस गया था । वहाँ एक भयावह गड्ढा है, जिसकी गहराई को कोई नहीं जानता है । एक दिन बाबा 'राधा' नाम का कीर्तन करते हुए प्रेमावेश में जा रहे थे, आँख बन्द कर 'राधे-राधे' कहते हुए आगे बढ़ते जा रहे थे, एक विशेष प्रेम का आवेश था लेकिन जैसे ही आँख खुली तो शरीर काँप गया क्योंकि नीचे 'विराध कुण्ड' था । 'राधा' नाम ने उनकी रक्षा की । एक पहाड़ी नदी के तेज बहाव में फँसने पर भगवान् ने ही उनकी रक्षा की । श्रीकृपालुजीमहाराज ने चित्रकूट में विशाल सन्त सम्मलेन का आयोजन किया, जहाँ बड़े-बड़े सन्त आये । उस सभा में 'बाबा' को सबसे पहले बोलने का अवसर दिया जाता था । बाबाश्री चित्रकूट के जंगलों में कभी मार्ग भटकते तो कोई चमत्कारिक रूप से उन्हें मार्ग दिखा जाता और अदृश्य हो जाता; इन अनुभवों ने बाबा को 'श्रीजी' की करुणा एवं 'ब्रज' की याद दिलाई और ब्रज की आस लिए किशोरीजी के धाम 'श्रीबरसाना' में वे आकर्षित होकर चले आये; उन्होंने प्रथम ठौर पाया साँकरी खोर में । कभी वे किसी वृक्ष तले विश्राम कर लेते, कभी लताओं का आश्रय मिलता । ब्रज के पर्वतों, गलियों, प्राचीन लीलास्थलियों में वे अपने आराध्य को पुकारते । अल्पावस्था होने से बाबा को 'भिक्षावृत्ति' का ज्ञान भी नहीं था, बिना माँगे ही कुछ मिल जाता तो पा लेते, अन्यथा भूखे ही रहते थे । कभी राधाकुण्ड पर शरीर कँपा देने वाली ठण्ड सहते और गाते – **'गोविन्दा-गोविन्दा जय राधे-राधे गोविन्दा ।'** इस तरह कुछ महीने बीते । उधर प्रयाग में माताजी के ऊपर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा । रो-रोकर उनका बुरा हाल हो गया । अपनी इकलौती सन्तान को खोजने के उन्होंने हर सम्भव प्रयास किये, परन्तु निराशा के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं आया । अन्त में किसी सिद्ध ब्रह्म बाबा द्वारा बताये पते पर खोजबीन की गई तो दीदीजी के पति और चाचाजी 'बाबाश्री' से मिलने 'बरसाना' आये । 'बाबाश्री' बरसाने की परिक्रमा करते तो उन्हें 'गह्वरवन' से विशेष लगाव होता । उस सघन गह्वरवन में ब्रह्माचल पर्वत के शिखर पर जीर्ण-शीर्ण स्थिति को प्राप्त 'मानगढ़' था, जहाँ मानवती 'श्रीराधा' को मनाने के लिए श्रीकृष्ण अनेक लीला करते थे, परन्तु यह स्थान अब डाकुओं का अड्डा था । कुख्यात जहान डाकू यहाँ लूट के माल बाँटने के लिए आता था । मानमन्दिर के फर्श पर खून के सूखे दाग स्पष्ट दिखाई देते थे, विषैले सर्प-बिच्छू आदि जीव-जन्तु यहाँ भरे पड़े थे, भूत-प्रेतों का भी यहाँ वास था; इन सबके भय के कारण मानमन्दिर में कोई नहीं आता था । 'बाबाश्री' मानगढ़ की प्राचीन गुफा (जहाँ मानशिला थी) में बैठकर अखण्ड भजन-आराधन किया करते थे । कभी हाड़ कँपा देने वाली ठण्ड में डुबकी लगाते तो कभी जेठ की भीषण गर्मी में खुली चट्टान पर ध्यानस्थ रहते । धीरे-धीरे उनके भजन के प्रताप से तामसी शक्तियाँ मानगढ़ से चली गयीं । इस बीच उनका अलग-अलग स्थानों में जाना भी लगा रहा । 'बाबाश्री' एक प्रभावशाली प्रवक्ता थे; उन्होंने जयपुर, अलवर और आगरा आदि स्थानों में बहुत से कार्यक्रम किये । अलवर के कार्यक्रम में 'बाबा' ब्रज आने के लिए बहुत व्याकुल हुए और वे कार्यक्रम को छोड़कर ब्रज लौट आये । कुछ समय तक बाबा अव्यवस्थित रूप से रहे । उन्होंने अपनी माताजी को एक बड़ा ही मार्मिक पत्र लिखा । इसी बीच बाबाश्री बड़े बाबा पूज्य श्रीप्रियाशरणजीमहाराज के सम्पर्क में आये, जिनसे उन्होंने ब्रज के ग्रन्थों एवं परम्पराओं का अध्ययन किया । मधुकरी की शिक्षा, सन्तों की रहनी और अनेकों उपदेशों के द्वारा बाबाश्री का पोषण हुआ (ब्रजप्रेम की निष्ठा वर्द्धित-पोषित हुई) । इस प्रकार उन्होंने 'बड़े बाबा' को गुरु रूप में स्वीकार किया । इसी बीच गह्वरवन में वास कर रहे रसिक प्रवर सन्त पण्डित श्रीहरिश्चन्द्रजीमहाराज की सेवा का अवसर बाबाश्री को प्राप्त

हुआ, उनकी आज्ञा से बाबा ने गह्वरवन में कुटी बनाई । बाबा कहते हैं कि 'पण्डित हरिश्चन्द्रजी' के ही आशीर्वाद से उनको गह्वरवन का अखण्डवास प्राप्त हुआ और अनेकों बार प्राणों की रक्षा हुई । सन् १९५८ से 'बाबा' गह्वरवन की कुटी में रहने लगे । श्रीनाम की आराधना में उनके दिन-रात बीत जाते थे । जब 'पण्डित हरिश्चन्द्रजीमहाराज' का गोलोक गमन हुआ तो बाबा उनके वियोग में बहुत रोये । उन्हीं दिनों श्रीदीक्षितजी, श्रीराधाबाबा और गीताप्रेस के सम्पादक भाई श्रीहनुमानप्रसादपोद्दारजी 'बरसाना' आये । 'बाबाश्री' उनसे मिलने श्रीजी मन्दिर गये । माताजी की इच्छा थी कि उनके प्रभाव और सत्संग से राम (बाबा के बचपन का नाम, जिसे माताजी लेती थीं) लौटकर प्रयाग वापस आ जायें । भाईजी ने बाबा से कहा कि कुछ सुनाओ तो उन्होंने राधासुधानिधि के कुछ श्लोक सुनाये । इतने भाव के साथ उन्होंने सुधानिधि के श्लोक गाये कि भाईजी और राधाबाबा की आँखों से अश्रुधारा बहने लगी । वे रस में ऐसा डूब गये कि बाबा को ब्रज छोड़कर प्रयाग जाने के लिए एक बार भी नहीं कह सके । उन्होंने बाबाश्री को आशीर्वाद दिया और कहा कि आपके द्वारा ब्रज में विशेष सेवा होगी । भाईजी ने बाबाश्री के लिए श्रीमद्भागवत पर अष्टाचार्यों की टीका डाक द्वारा गोरखपुर से बरसाना भेजी ।

एक बार जब बड़े बाबा को पता लगा कि बाबा की माताजी आयी थीं और उन्होंने उन्हें गह्वरवन में रुकने नहीं दिया तो उन्होंने बाबा को समझाया कि अपनी माँ को यहाँ आश्रय दो, जिससे कि वे भी ब्रजवास करें । इस प्रकार माताजी को भी ब्रजवास मिल गया । माताजी के आने के बाद बाबा ऊपर मानगढ़ में रहने लगे ।

सन् १९६२ में श्रीसखीशरणबाबा 'बाबाश्री' की सन्निधि में आये । पूर्ण शरणागत भाव से उन्होंने आजीवन श्रीबाबामहाराज की सेवा की । पचासों वर्ष उपरान्त गह्वरवन में ही उनका नित्य धामगमन हुआ । तब बाबाश्री की कृपा शक्ति का अनुभव सभी ने किया । श्रीरघुवीरभगतजी ने भी सर्वात्मसमर्पण भाव से बाबाश्री की सेवा की ।

अष्टाचार्यों की टीका का अध्ययन करने के लिए संस्कृत का पूर्व ज्ञान पर्याप्त नहीं था, अतः बाबाश्री ने संस्कृत में सम्पूर्ण पूर्व मध्यमा और उत्तर मध्यमा किया । तीन वर्ष की पढ़ाई तीन महीने में ही पूरी कर ली । सन् १९६७ में वृन्दावन के निम्बार्क संस्कृत विद्यालय से दर्शन शास्त्र से 'शास्त्री' किया । बाबा के संस्कृत के गुरु 'श्रीवैद्यनाथ झा' बाबा एवं उनकी रहनी का बहुत सम्मान करते थे । कठिन समय में बाबा ने उनका खूब सहयोग किया । वेदान्त शास्त्री की परीक्षा में बाबा ने सम्पूर्ण विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया । श्रीझाजी ने बताया कि श्रीबाबा को स्वर्ण पदक मिलने के लिए मेरे पास पत्र आया, उसमें लिखा था कि अपने विद्यार्थी को भेजो । मैंने बाबा को फोन किया । भला बताइये ऐसा कोई विचित्र विद्यार्थी होगा !! बाबा ने मुझसे कहा – 'गुरुजी ! मुझे स्वर्ण पदक नहीं चाहिए, आप ही ले लीजिये ।' मैंने कहा कि ऐसा भी कभी होता है कि स्वर्ण पदक आपको मिला है और वह मुझे मिल जाएगा । आप पढ़े-लिखे हैं, बी.ए. हैं । बाबा ने कहा – 'गुरुजी ! उसे लौटा दीजिये ।' बाबा ने ऐसा त्याग किया । स्वर्ण पदक को कोई छोड़ता नहीं है । बाबा बहुत बड़े त्यागी हैं । ऐसे हैं बाबा, कमाल के हैं बाबा । वे मेरे पास बैठते थे । मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ कि इतने बड़े सन्त का मुझे सान्निध्य प्राप्त हुआ । मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ ।

मानगढ़ की अँधेरी कोठरी में बाबा संस्कृत का अध्ययन किया करते थे । पेन्सिल नहीं होती तो कोयले के टुकड़े से ही संस्कृत के श्लोक दीवारों पर लिख डालते थे । एक वर्ष तक बाबा मौन भी रहे, बोलते तो केवल संस्कृत में । श्रीमद्भागवत के वेणुगीत के श्लोक – '**बर्हापीडं नटवर वपुः.....**' की बाबा ने अपने सत्संग में छः महीने तक व्याख्या की । अपने शुरूआती दिनों में ही बाबा ने कुछ ब्रजवासियों को साथ लेकर हरिनाम-संकीर्तन प्रारम्भ किया था । धीरे-धीरे उनके संकीर्तन में लोगों की संख्या बढ़ने लगी और कीर्तन की व्यवस्था हो गयी । ब्रजवासी बालकों ने भी बाबा के पास जाकर पढ़ना आरम्भ कर दिया । बाबा उन्हें पठन-पाठन के साथ ही ब्रज की संस्कृति के सम्बन्ध में भी बोध कराने लगे । बाबा ने बच्चों में भगवत्प्रेम, राष्ट्र प्रेम एवं सेवा के संस्कार डाल दिए । वह एक नवीन ऊर्जा एवं संघर्षों का दौर था । गह्वरवन में बहुधा लोग लकड़ी काटा करते और अपने पशुओं को चराया करते थे । इन सबसे गह्वरवन धीरे-धीरे उजड़ने लगा ।

४६ वर्ष तक घोर संघर्ष करने के पश्चात् गह्वरवन सुरक्षित हुआ । आज यह वन ब्रज के सबसे मनोरम स्थलों में से एक है । गह्वरवन की यह छटा न होती, यदि बाबा ने संघर्ष न किया होता ।

मानपुर के श्रीप्रकाश प्रधानजी एवं चिकसौली के पण्डित श्रीबाबूलालजी तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती यमुना देवीजी – ये दोनों परिवार बाबाश्री के प्रति पूर्णतया समर्पित थे । अतः इन दोनों परिवारों ने भी जीवन में अनेक कष्ट सहे । आज उनके बच्चे भी श्रीबाबामहाराज की सेवा में समर्पित हैं । एक ओर जहाँ श्रीराधाकान्तशास्त्रीजी ने मानमन्दिर की सेवाओं का कार्यभार सँभाला है, दूसरी ओर पण्डित श्रीरामजीलाल शास्त्रीजी एवं उनकी भतीजी साध्वी श्रीमुरलिकाजी ने भागवत कथाओं के माध्यम से देश-विदेश में भगवन्नाम का प्रचार किया ।

सन् १९७१ में इस्कॉन संस्था के श्रीराधानाथ स्वामी बाबा के दर्शन करने मानमन्दिर में आये । वे बाबा से बहुत प्रभावित हुए । अपनी पुस्तक 'द जर्नी होम' (The journey home) में वे लिखते हैं – Ramesh Baba became a life long friend and great inspiration . He lived and spoke what he believed, caring nothing for public opinion . I founded fascinatic that he lived in similar conditions to the sages of Himalayas while never leaving Vrindavan . he was a strict ascetic and profound scholar, who spent his life begging and crying to be an instrument of Radha Krishna's gentle love , when he sang and when he served, that love was evident . रमेश बाबा मेरे दीर्घकालीन मित्र एवं महान प्रेरणा बने रहे । वे जनता की राय की परवाह किये बिना वही जीते और वही बोलते थे, जिसमें वे विश्वास रखते थे । मुझे दिलचस्प लगा कि वे हिमालय के ऋषियों जैसी ही परिस्थितियों में रहे, जबकि उन्होंने कभी ब्रज-वृन्दावन नहीं छोड़ा । वे एक कठोर तपस्वी और उद्भट विद्वान् थे, जिन्होंने अपना जीवन श्रीराधाकृष्ण के युगल प्रेम-माधुर्य का साधन बनने हेतु प्रार्थना करने और रोने में बिताया । जब उन्होंने गाया और जब उन्होंने सेवा की तो वह प्रेम स्पष्ट था ।

गह्वरवन के दिव्य सन्त मौनी बाबा ने सन् १९७५ में चमत्कारिक ढंग से शरीर छोड़ा । उनकी स्मृति में बाबा श्री ने पहली भागवत सप्ताह कथा कही । आगे गोवर्धन आदि स्थानों में उनकी भागवत कथाओं का क्रम चला । सन् १९८५ की गह्वरवन की उनकी भागवत-कथा इतनी प्रभावशाली रही कि उसका प्रकाशन मानमन्दिर सेवा संस्थान द्वारा 'भागवतामृतम्' के रूप में किया गया । सन् १९५९ में बाबा ने रमणरेती वाले श्रीहरिनामदासमहाराज की सन्निधि में ब्रज चौरासी कोस की यात्रा की थी । वे बड़े ही पहुँचे हुए सन्त थे, वे कहते थे कि जो यात्री इन ब्रज के पड़ावों का नित्य स्मरण करेंगे, उन्हें प्रणाम करेंगे, उन्हें निश्चित रूप से ब्रजवास मिलेगा । माताजी ने उनके वचन को सिद्ध करके दिखाया । अगले कई वर्षों तक 'बाबा' ब्रज की परिक्रमा एकान्त रूप से करते रहे; ब्रज के लुप्त होते तीर्थस्थलों को देखकर दुःखी होते । सुदूर क्षेत्रों में वाहन द्वारा नहीं जाया जा सकता था । ब्रज का आस्वादन ब्रजप्रेमी कर सकें, इसके लिए श्रीबाबा ने ब्रह्मविलीन सन्त श्रीनित्यानन्दजीमहाराज की प्रेरणा से सन् १९८८ में ब्रज चौरासी कोस की यात्रा उठाई । प्रथम श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में लगभग २०० यात्री थे । यात्रा ११ हजार रुपये कर्ज लेकर उठाई गयी थी, फिर भी यात्रा को निःशुल्क रखने का संकल्प लिया गया । पूर्णतया निःशुल्क अनवरत चल रही इस यात्रा में पूरे भारत से कार्तिक के महीने में हजारों यात्री भाग लेते हैं । यह अपने आप में कल्पनातीत विषय है । सभी यात्रियों के चालीस दिनों तक रहने-खाने आदि की व्यवस्था बड़े ही प्रेम से होती है । यात्रा में चौबीस घंटे नाम-संकीर्तन चलता है । यात्रा ने ब्रज के उपेक्षित पर्वतों एवं कुण्डों की ओर ध्यान आकर्षित किया । ब्रज के पर्वतों की रक्षा नहीं हो पा रही थी । बाबा ने जन जागृति के हर सम्भव प्रयास किये किन्तु सफलता नहीं मिली । एक दिन बाबा सखीगिरि पर्वत पर धरना देकर बैठ गये । खनन जारी था और खनन माफियाओं के गुण्डे बाबा और उनके अनुयायियों पर प्रहार कर रहे थे किन्तु बाबा का संघर्ष भी निरन्तर चलता रहा । श्रीबाबामहाराज के नेतृत्त्व में ब्रजवासियों एवं ब्रजप्रेमी सन्तों का त्याग रंग लाया । भगवत्कृपा से जिला प्रशासन

ने ऊपर के दबाव से सैकड़ों वाहन जब्त करके खनन माफिया की कमर तोड़ दी और इस तरह धरना समाप्त हो गया । जब ब्रज के डीग एवं कामां तहसील में खनन ने एक बार पुनः भयावह रूप धारण कर लिया तो सन् २००९ की ब्रजयात्रा के अन्तिम पड़ाव स्थल कामां में श्रीबाबा आमरण अनशन करके बैठ गये, इस संकल्प के साथ कि जब तक ब्रज के पर्वतों का पूरी तरह संरक्षण नहीं होगा, तब तक मैं अन्न-जल नहीं ग्रहण करूँगा, चाहे मेरे प्राण ही क्यों न चले जाएँ । श्रीबाबा के अनशन का यह प्रभाव हुआ कि बारह घण्टे के भीतर ही तत्कालीन मुख्य मन्त्री का बाबा के पास फोन आया । उसने बाबाश्री से प्रार्थना की – 'महाराजजी ! आप अपना अनशन त्याग दीजिये । डीग व कामां तहसील में होने वाले व्यापक खनन पर अब पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया जाएगा ।' मुख्यमन्त्री की इस घोषणा के बाद से डीग एवं कामां तहसील में व्यापक रूप से होने वाले पर्वतों के खनन पर पूर्ण विराम लग गया । श्रीबाबामहाराज के इस अनशन से खनन-माफियाओं के विरूद्ध ऐतिहासिक विजय प्राप्त हुई । इस विजय में ब्रज प्रेमी सन्त श्रीहरिबोल बाबा की भी उल्लेखनीय भूमिका रही । जब ठाकुरजी-श्रीजी की लीला स्थलियाँ ही न बचते तो कैसा ब्रज ? हम परिक्रमा किसकी करते ? श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं के आश्रय के अतिरिक्त ब्रज सदा गोचारण भूमि रही है । गो व गोपाल स्वच्छन्द विचरण करें, इसके लिए श्रीबाबा महाराज के द्वारा कई पहल किये गये । गोचर भूमि को अतिक्रमण मुक्त कराया गया । वृक्षारोपण की मुहिम पूरे ब्रज में चलायी गयी । लाखों वृक्ष लगाकर, ब्रज को हरा-भरा कर यहाँ की मूल धरोहर को पुनर्स्थापित किया जा रहा है । न जाने कितने कुण्ड-सरोवरों आदि का जीर्णोद्धार श्रीबाबामहाराज ने किया, कई लुप्त स्थलों को प्रकट किया जैसे श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठक, देवसरोवर, रासौली (रासवन), रत्नकुण्ड, विह्वलकुण्ड, हताना का कुण्ड, गोमती गंगा, गयाकुण्ड, दोहनीकुण्ड, नयनसरोवर, सूर्यकुण्ड, वृषभानुकुण्ड, पीलीपोखर, जड़खोर की गुफा, केदारनाथ आदि ।

वर्षों पूर्व जिस यमुना किनारे बैठकर बाबा रोया करते थे, उस यमुना की ब्रज में दुर्दशा उनसे देखी नहीं गयी । श्रीयमुनामहारानी के वास्तविक स्वरूप को ब्रज में लाने का बेजोड़ आन्दोलन छेड़ा था बाबा ने । उन्होंने ब्रज के गाँव-गाँव में जाकर सभायें की । लाखों भक्त चल पड़े थे दिल्ली अपनी यमुना मैया को लाने । बाबाश्री की प्रेरणा से ब्रज के सभी सन्तों ने एकजुट होकर प्रयास किया था । सन्तों के आशीर्वाद एवं भगवन्नाम की कृपा से यमुना आन्दोलन तो सफल रहा परन्तु सरकारी वादे केवल आश्वासन बनकर रह गये परन्तु ऐसा सम्भवतया पहली बार हुआ होगा, जब लाखों की भीड़ निःस्वार्थ भाव से किसी आन्दोलन के लिए जुटी हो । धन्य है ऐसी विभूति को, जो समाज को हर सम्भव रूप से जागृत कर रहे हैं ।

भगवन्नाम प्रचार के अतिरिक्त पर्वत, कुण्ड एवं यमुना – बाबाश्री के चार में से तीन स्तम्भ रहे । गोमाता की रक्षा, वह चतुर्थ स्तम्भ था, जिसकी भावना बाबाश्री के अन्दर शुरू से ही थी । सन् २००४ की ब्रजयात्रा में जब चन्द्रसरोवर के परम गोनिष्ठ सन्त श्रीठाकुरदासबाबा ने बाबाश्री को गोवंश के सम्बन्ध में आशीर्वाद दिया कि आपके द्वारा बहुत बड़ी सेवा होनी है । आगे परिस्थिति स्वतः ही बन गयी, १४ मई, २००७ को माताजी ने गह्वरवन में ब्रजरज की प्राप्ति की । माताजी के गौ के प्रति वात्सल्य और प्रेम से सभी परिचित थे । चार गायों से शुरू की गयी गोशाला का शुभारम्भ ७ जुलाई, २००७ को हुआ । उनकी ही स्मृति में गोशाला का नाम रखा गया – 'श्रीमाताजी गोशाला', जहाँ बूढ़ी, बीमार, असहाय और कत्लखानों से बचायी गयी गायों की मातृवत् सेवा होने लगी, जहाँ हजारों गोवंश की सेवा निःस्वार्थ भाव से हो रही है । गोवंश की चिकित्सा के लिए समर्पित गो-चिकित्सालय में आधुनिक मेडिकल चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध हैं । 'माताजी गोशाला' में गोबर गैस का उत्पादन भी किया जाता है । जैविक खाद एवं गोमय उत्पाद आदि भी यहाँ उपलब्ध हैं । गोमाता एवं पर्यावरण की उत्कृष्ट सेवा के लिए भारत सरकार के द्वारा श्रीबाबामहाराज को मार्च २०१९ में पद्मश्री से सम्मानित किया गया । सच कहें तो यह पद्मश्री का सौभाग्य है, जिसे ब्रजरत्न की अगवानी करने का अवसर मिला ।

श्रीवंशीअलीजी द्वारा रचित बरसाना धाम की महिमा को प्रकाशित करने वाला लुप्त ग्रन्थ 'श्रीवृषभानुपुर शतक' को बाबा ने सन् २०२१ में प्रकट किया । स्वरचित पदों, कीर्तन एवं ब्रजरसियाओं का अमूल्य संग्रह 'रसिया रसेश्वरी',

श्रीराधासुधानिधि की सरल टीका तथा अनेक छोटी पुस्तकों का प्रकाशन, भक्त चरित्र, मासिक पत्रिका आदि आपकी संरचनायें हैं । ब्रज चौरासी कोस की लीलास्थलियों एवं वृहद्-ब्रज की महिमा को उद्घाटित करने हेतु श्रीबाबामहाराज के द्वारा विशेष रूप से दो महत्वपूर्ण ग्रन्थ 'रसीली ब्रज यात्रा – भाग १' एवं 'रसीली ब्रजयात्रा भाग -२' का प्रकाशन किया गया है ।

'राधे किशोरी दया करो' – आपकी ही मधुर भावना का प्रकाश है । यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि वृन्दावन के गोस्वामियों का आदर्श बाबामहाराज ने स्थापित किया है । साम्प्रदायिक संकीर्णता की बाबा ने सर्वदा ही भर्त्सना की है । बाबाश्री ने ब्रजरस लूटा है और हम सबको लुटाया है । हृदय की कन्दराओं से जब वह आर्त पुकार बाबा के मधुर कण्ठ से निःसृत होती है तो समूचा जगत् ब्रजरस की तरंगों में बहने लगता है । सभी सम्प्रदायों के रसिक सन्तों व आचार्यों की वाणियों का गान बाबा ने भावनाओं से भरकर किया है । बाबाश्री ने सदैव प्रेरित किया है; उत्साह और उमंग के स्रोत हैं 'बाबाश्री' । आज भी श्रीबाबामहाराज अथक प्रयास करते हैं हमें भावनाओं से भर देने को परन्तु इन असम्भव प्रतीत होने वाले कार्यों का श्रेय बाबा स्वयं कभी नहीं लेते हैं, केवल श्रीजी की करुणा एवं उनकी आराधना को ही हेतु मानते हैं । निष्काम आराधना ही वास्तविक शक्ति है । यही सिद्धान्त यहाँ की सफलता का रहस्य है । श्रीसद्गुरुदेव भगवान् ने तो स्वयं को ही न्यौछावर कर दिया है हम सबके कल्याण के लिए । त्रैकालिक दैनिक सत्संग को तो पचासों वर्ष हो गये । इतना विशद् व विस्तृत 'कथा-सत्संग' कोई जीवन भर भी सुने तो जीवन पूर्ण हो जाए परन्तु सत्संग नहीं । **'भालो न खाइबे, भालो न पहिरबे ।'** के सिद्धान्त पर चलने वाले यहाँ के साधुओं के लिए वैराग्य ही सच्चा आभूषण है । सन्तों के आश्रय के रूप में मानमन्दिर के द्वार सदैव खुले रहते हैं । श्रीजी स्वरूपा बाल-किशोरियों के लिए 'रसकुञ्ज' के द्वार सदा खुले हैं । श्रीबाबामहाराज द्वारा संस्थापित 'श्रीहरिनाम प्रचारिणी सभा' के द्वारा सबसे बड़ा दान 'भगवन्नाम का दान' हजारों गाँवों और शहरों में चल रहा है ।

नित्य आराधना एवं ब्रजरस-रसिया की झाँकी प्रतिदिन रसमण्डप में देखने को मिलती है । बाबाश्री ने इसी आराधना को मूल माना है । कभी मानगढ़ के रासमण्डल पर होने वाले घनघोर संकीर्तन की ध्वनि नीमगाँव तक जाया करती थी । गह्वरकुण्ड पर हुई आराधना का स्मरण मात्र से रोमांच हो आता है । रसकुञ्ज की बाल-आराधिकाओं की साधना, रसमण्डप में बह रहे रस का स्रोत है । ब्रजरस की परम्परा को रसमण्डप ने नई ऊर्जा प्रदान की है ।

श्रीभगवत्कथाओं एवं उत्सव इत्यादि की केन्द्र बन चुकी है 'श्रीमाताजी गोशाला' । निःशुल्क भोजन-प्रसाद की व्यवस्था गोशाला में तो चल ही रही है तथा 'माताजी गोशाला' की ओर से श्रीजी-मन्दिर की पहाड़ी स्थित 'श्रीराधारानी रसोई' के नाम से भी चल रही है । मनुष्यों के लिए भी निःशुल्क अस्पताल का संचालन सफलतापूर्वक हो रहा है, जिसका लाभ सभी ब्रजवासी ले रहे हैं । बड़े-बड़े इलाज यहाँ सहजता से हो जाते हैं । कहाँ है ऐसी उदारता !! ऐसी उदारता तो परम करुणामयी की कृपा से श्रीबरसाना-गह्वरवन में ही जन-सामान्य को भी दिखाई दे रही है । ब्रज, ब्रजेश एवं ब्रजवासियों की ऐसी सेवा के पीछे हमारे प्यारे बाबा ही तो हैं । यह श्रीजी की विशेष करुणा ही तो है, जिस वन को श्रीजी ने अपने करकमलों से बनाया है, उसी वन में हमारे बाबा ने वास किया है और हमें वास दिया है । अरे भइया ! ऐसी उदारता तो केवल यहाँ ही हो सकती है ।

इसी वर्ष कामवन के विमलकुण्ड के तट पर आयोजित हुई अपनी कथा के दौरान मलूक पीठाधीश्वर श्रीराजेन्द्रदासजीमहाराज ने श्रीबाबा की प्रशस्ति में ये शब्द कहे थे – 'पूज्य श्रीबाबामहाराज का दर्शन साक्षात् श्रीयुगल सरकार का दर्शन है, पूज्य श्रीबाबा का दर्शन श्रीराधारानी का दर्शन है । पूज्य बाबा का दर्शन श्यामसुन्दर का दर्शन है, पूज्य बाबा का दर्शन ब्रज के समस्त रसिकाचार्यों का दर्शन है । पूज्य बाबा का दर्शन चौरासी कोस ब्रजमण्डल का दर्शन है । श्रीबाबा तो हमारे माता-पिता, गुरु, भगवान् सब कुछ हैं । सब कुछ पूज्य बाबा हैं और हम बाबा के बालक हैं । यहाँ मन्दिर में विराजमान 'श्रीनृसिंह भगवान्' से हम यही प्रार्थना करते हैं कि बाबा अनन्तकाल तक हम लोगों के मध्य प्रसन्न

एवं स्वस्थ विराजे रहें । हम लोगों को कभी बाबा के वियोग की अनुभूति न करनी पड़े, ऐसी श्रीजी के चरणों में, नृसिंह भगवान् के चरणों में प्रार्थना है कि बाबा के सम्पूर्ण अरिष्टों को नृसिंह भगवान् अपनी एक गर्जना में ही समाप्त कर दें । बाबा के श्रीचरणों में दास का बार-बार साष्टांग प्रणाम है ।'

सकल कला-गुणनिधि 'श्रीराधारानी'

बाबाश्री द्वारा कथित 'श्रीराधासुधानिधि' (७/१२/१९९९) से संकलित

राधाकरावचित पल्लव वल्लरीके राधापदाङ्क विलसन् मधुरस्थलीके ।
राधायशो मुखर मत्त खगावलीके राधा विहार विपिने रमतां मनो मे ॥ (श्रीराधासुधानिधि – १३)

इस वन के सभी पल्लव-पुष्प, लता-पता आदि श्रीराधारानी के हाथ से सजाये गये हैं । जहाँ की सभी स्थलियाँ श्रीराधारानी के चरणकमलों के चिह्नों से चिह्नित हैं । जहाँ के सभी पशु-पक्षी श्रीराधारानी का यश गाते रहते हैं । श्रीराधिकाजी के ऐसे विहार विपिन में हमारा मन रमे । राधारानी और श्यामसुन्दर इस वन को सजाते हैं । इसी बात को श्रीमद्भागवत में श्यामसुन्दर दाऊजी के विषय में कहते हैं – **धन्येयमद्य धरणी तृणवीरुधस्त्वत्-पादस्पृशो द्रुमलताः करजाभिमृष्टाः ।**
नद्योऽद्रयः खगमृगाः सदयावलोकै-र्गोप्योऽन्तरेण भुजयोरपि यत्स्पृहा श्रीः ॥ (श्रीभागवतजी १०/१५/८)

श्रीकृष्ण कहते हैं – हे दाऊ ! यह धरणी धन्य है, जो तुम्हारे चरणों को स्पर्श कर रही है । ऐसा कृष्णावतार में ही होता है कि ब्रज की धरती पर श्रीकृष्ण नंगे पाँव चलते हैं ।

चलसि यद् व्रजाच्चारयन् पशून् नलिनसुन्दरं नाथ ते पदम् ।
शिलतृणाङ्कुरैः सीदतीति नः कलिलतां मनः कान्त गच्छति ॥ (श्रीभागवतजी १०/३१/११)

ब्रजगोपियाँ कहती हैं – हे श्यामसुन्दर ! आप नंगे पाँव वनों में चलते हैं । (यही ब्रजभूमि की विशेषता है) कमल से भी सुन्दर और कोमल आपके चरण हैं । जब नंगे पाँव आप ब्रज की धरती पर चलते हैं तो उनमें कंकड़, तिनके, कठोर घास और काँटे चुभते हैं तो क्या आपको कष्ट नहीं होता है ?

गोपियों के द्वारा कहा गया यह श्लोक दिखाता है कि राधिकारानी और श्रीकृष्ण इस ब्रजभूमि में निरावरण चरणों से चलते हैं । इसी प्रकार श्रीकृष्ण दाऊजी से कहते हैं – **'धन्येयमद्य धरणी......'** यह ब्रजभूमि धन्य है, दोनों के चरणों के स्पर्श से, लताएँ जो जमीन पर लेटकर आगे बढ़ती हैं । लतायें दो प्रकार की होती हैं, एक सरिद् गामिनी और दूसरी ऊर्ध्व गामिनी । सरिद् गामिनी लता जमीन पर बिछती है तथा ऊर्ध्व गामिनी लता ऊपर की ओर बढ़ती है । निकुंज भवन में सरिद् गामिनी लतायें अपने पल्लवों से ठाकुरजी-श्रीजी की शय्या, तकिया और बिछैया बनाती हैं । ऊर्ध्व गामिनी लतायें लाल-ललना के लिए चंदोवा और अनेक प्रकार के साज श्रृंगार सजाती हैं, निकुंज भवन के खम्बे और छत बनाती हैं ।

श्रीकृष्ण बलरामजी से कह रहे हैं – हे दाऊ ! यहाँ के तृण और लताएँ, जिनको आपके चरण स्पर्श करते हैं, वृक्ष और लताएँ आपके हाथों के द्वारा छुई गयी हैं । यह ब्रजभूमि धन्य है । यहाँ की नदियाँ, पर्वत, पशु-पक्षी आदि आपकी दृष्टि से पवित्र होते हैं । इसी प्रकार जब ठाकुरजी-श्रीजी ब्रजभूमि में चलते हैं तो उनकी कृपा दृष्टि यहाँ के पर्वतों, नदियों और पशु-पक्षियों पर पड़ती है । श्रीकृष्ण बलरामजी से कहते हैं कि ब्रजगोपियाँ आपकी भुजाओं में आकर धन्य हो जाती हैं । ये सब बातें बताती हैं कि ठाकुरजी और श्रीजी ब्रजभूमि में निरावरण चरणों से चलते हैं । यह भूमि धन्य होती है ।

राधारानी और श्रीकृष्ण हर कुंजों में बिना कुछ पहने निरावरण चरणों से चल रहे हैं । सारी ब्रजभूमि उनके चरण चिह्नों से छपती जा रही है । **'वृन्दावन एक सुन्दर जोड़ी ।' 'खेलत जहाँ-तहाँ वंशी-वट'** यह जोड़ी क्या करती है ? ब्रजभूमि की लीला स्थलियों में, वंशी-वट, गह्वर वन आदि स्थलों में घूमती है । **'नन्दनन्दन वृषभानुकिशोरी'** ब्रजभूमि के हर कोने, हर स्थल में यह जोड़ी खेल रही है । चौदहों लोकों में जो सुन्दरता थी, वह एकत्रित होकर राधा और कृष्ण बन गयी । **'भुवन चतुर्दश की सुन्दरता, सुन्दर श्याम राधिका गोरी ।'** एक नीली ज्योति है, एक गौर ज्योति है । **'जय**

श्री भट्ट कहाँ लगि बरनौं, रसना एक न लाख करोड़ी ॥' इस पद में यह बताया गया कि यह रंगीली जोड़ी ब्रजभूमि के हर स्थल में खेल रही है । इसीलिए उस जोड़ी के चरणचिह्न हर जगह मिलते हैं । भागवत के युगल गीत में भी कहा गया है – **निजपदाब्जदलैर्ध्वजवज्रनीरजाङ्कुशविचित्रललामैः ।**

व्रजभुवः शमयन् खुरतोदं वर्ष्मधुर्यगतिरीडितवेणुः ॥ (श्रीभागवतजी १०/३५/१६)

जब युगल सरकार चलते हैं तो जो चिह्न श्रीकृष्ण के बायें चरण में हैं, वे ही चिह्न श्रीजी के दाहिने चरण में हैं, अपनी अँगुलियों के द्वारा वे ब्रजभूमि पर अपने चिह्नों की छाप लगा रहे हैं । अँगुलियों से चलने का भाव है कि उनके चरण बड़े ही कोमल हैं, वृन्दावन की बड़ी सुन्दर कोमल निकुंज गलियाँ हैं । उनके चरणों से कहीं पर कमल चिह्न अंकित होते हैं, कहीं ध्वज, वज्र, कहीं अंकुश आदि चिह्न अंकित होते हैं, युगल सरकार के उन सुन्दर चरणकमलों के चिह्नों से सुशोभित उस सुन्दर ब्रजभूमि का कौन वर्णन कर सकता है ? उस शोभा को कोई समझ ही नहीं सकता है, जहाँ राधा-माधव के चरण चिह्न चमकते हैं । श्रीकृष्ण के साथ लाखों गायें भी चलती हैं । श्रीकृष्ण के चरणों में एक बड़ा चमत्कार है, जब लाखों गायें हैं और वे चलती हैं तो उनके खुरों के प्रहार से ब्रजभूमि खुद जाती है । ब्रज की भूमि इतनी कोमल है, पुष्पमयी, रसमयी, मधुमयी है कि जब गायें उस पर चलती हैं तो शुकदेवजी कहते हैं कि जहाँ करोड़ों गायें चलती हैं तो भूमि खुदती भी है, खुरतोदं – उद का अर्थ है कष्ट, जब ब्रजभूमि पर गायों के कठोर खुर पड़ते हैं तो यह बड़ी कोमल सखीरूपा भूमि है । खुरों से पीड़ा भी होती है किन्तु उसी क्षण एक दूसरा चमत्कार यह होता है कि जब ठाकुरजी-श्रीजी के चरण पड़ते हैं तो ब्रजभूमि पर करोड़ों गायों के खुरों का जो प्रहार होता है, वह बदलकर सुन्दर अमृतमय हो जाता है । उनके श्रीचरणों में ऐसा चमत्कार है । **'व्रजभुवः शमयन् खुरतोदं वर्ष्मधुर्यगतिरीडितवेणुः'** - श्रीकृष्ण अपनी सुन्दर चाल से वंशी बजाते हुए आते हैं तो उनके चरणों में ऐसा चमत्कार है कि कोटि-कोटि गायों के जो खुर ब्रजभूमि पर पड़ते हैं तो उसको व्यथा नहीं होती है और उसकी सुन्दरता बढ़ती जाती है । इसीलिए सुधानिधि में कहा गया – **'राधापदाङ्क विलसन् मधुरस्थलीके ।'** जहाँ हर स्थली पर राधा-माधव के चरणों के सुन्दर चिह्न अंकित होते हैं, उस भूमि के बारे में क्या कहा जाए ? इस श्लोक की पंक्ति – **'राधाकरावचित-पल्लव-वल्लरीके'** के बारे में किसी अन्य महापुरुष ने एक और भाव बताया । वल्लरी का अर्थ लतायें भी होता है और वल्लरी गोपियों को भी कहते हैं । 'राधाकरावचित' – श्रीजी के करकमल से अवचित माने चुनी हुई, जहाँ उनकी किंकरियाँ (गोपियाँ) जिस धाम की शोभा को बढ़ाती हैं । अवचित माने चुनना भी होता है । इसका भाव वे महापुरुष बताते हैं कि श्रीजी ऐसी कृपामयी हैं कि महारास में जाने से पहले वे हर गोपी को रास की शिक्षा, श्रृंगार की शिक्षा देती हैं । रास की जो सभ्यता-संस्कृति है, उसके बारे में विहारिनदेवजी ने लिखा है –

'यों बोलिए न डोलिए महल की टहल' जैसे संसार में होता है कि एक व्यक्ति गा रहा है तो दो व्यक्ति हल्ला करते हैं, ऐसा रास में नहीं होता है । वहाँ हर चीज स्वयं राधिकारानी सिखाती हैं, सजाती हैं । इसका प्रमाण है –

विचित्रवरभूषणोज्ज्वलदुकूलसत्कञ्चुकैः सखीभिरिति भूषिता तिलकगन्धमाल्यैरपि ।

स्वयं च सकलाकलासु कुशलीकृताः नः कदा सुरासमधुरोत्सवे किमपि वेशयेत् स्वामिनी ॥ (श्रीराधासुधानिधि - ११२)

रास-महारास में जाने के पहले स्वयं वृषभानुनन्दिनी राधारानी शिक्षा देती हैं । इस संसार में भी संकीर्तन में यदि कोई वाद्य बजाने में बेताल कर देता है, गाने में बेसुरा कर देता है तो लोग उसे टोकते हैं कि कैसे बजाते हो ? उससे रस नष्ट होता है और सबका ध्यान बँटता है । इसी प्रकार रास में कहीं कोई गड़बड़ न हो जाए, इसके लिए श्रीराधारानी सभी सखी-सहचरियों को समस्त विद्याओं व कला में, गान-वादन में, नृत्य में पारंगत कर देती हैं । श्रीजी स्वयं सिखाती हैं । 'स्वयं च सकला कलासु' – सकला कलासु का मतलब केवल गाना-बजाना ही नहीं है, कैसे श्रृंगार करना है ? कैसे शय्या की रचना करनी है, कैसे वेष-भूषा सजानी है, चित्र कैसे बनाना है ? जितनी भी कलायें हैं, एक-एक कला में समस्त सखियों को श्रीजी चतुर बनाती हैं । उसके बाद फिर सुन्दर रास के महोत्सव में प्रवेश होता है । इसीलिए तो कहा गया है कि वहाँ इतनी तगड़ी शिक्षा है कि कोटि-कोटि सरस्वती भी आ जाती हैं तो ये नहीं जान पाती हैं कि कौन सा राग है,

कौन सी ताल है ? रास में सखियों के बारे में कहा गया है – '**एक ते एक संगीत की स्वामिनी**' – वहाँ तो अनन्त कलायें हैं । हित चतुरासीजी का यह पद है – **रास में रसिक मोहन बने भामिनी ।** इस पद के बड़े विचित्र अर्थ हैं । कभी-कभी तो युगल सरकार पर यह पद घटता है कि रसिक मोहन और भामिनी (राधारानी और श्यामसुन्दर) दोनों अच्छे लग रहे हैं लेकिन कभी-कभी इसका अर्थ बड़ा विचित्र हो जाता है कि रास में आज श्यामसुन्दर स्वयं भामिनी बनकर नाच रहे हैं और फिर इसी तरह पद की सारी पंक्तियाँ घटती हैं । 'रास में रसिक मोहन बने भामिनी' रास में श्यामसुन्दर भामिनी बनकर नृत्य कर रहे हैं । नित्य ही वे तो बरसाने में आते हैं तो कभी मालिन बनते हैं, कभी लीला गोदनहारी बनते हैं । रास में उन्होंने बड़ी ही अद्भुत नील सखी का रूप बनाया और नृत्य करने लगे । 'सुभग पावन पुलिन सरस सौरभ नलिन' यमुनाजी का सुन्दर किनारा है और रात में कमल खिल रहे हैं । रात में कमल के खिलने का वर्णन भागवत में रास पंचाध्यायी में भी है, ऐसा नहीं कि केवल हित चतुरासी जी में ही है । भागवत में लिखा है – 'बाहुं प्रियांस उपधाय गृहीतपद्मो.....' 'पद्म' का अर्थ होता है कमल । रात में कमल, रात में कमल खिलने से पता चलता है कि चिन्मय धाम में दिन-रात यानी काल का बन्धन नहीं है । इसीलिए कहा गया – **'सुभग पावन पुलिन सरस सौरभ नलिन'** बड़ा ही सुन्दर यमुनाजी का किनारा है । 'नलिन' अर्थात् कमल खिले हुए हैं । **'मत्त मधुकर निकर सरद की यामिनी ।'** कमलों पर भँवरे होते हैं । कमल और भँवरे का जोड़ा होता है । शरद की रात में कमलों पर मतवाले भँवरों का समुदाय मंडरा रहा है । **'त्रिविध रोचक पवन, ताप दिनमनि दवन, तहाँ ठाड़े रवन संग शत कोटि कामिनी ।'** तीन प्रकार की वायु बह रही है । जब तीन प्रकार की वायु होती है तो अच्छा लगता है । उसके तीन गुण होते हैं – शीतल, मन्द और सुगन्ध । भीनी-भीनी सुगन्ध आ रही हो, धीरे-धीरे शीतल पवन का झोंका चल रहा हो । अनेक गोपियाँ खड़ी हैं । हितहरिवंशजी आगे कहते हैं – **'ताल बीना मृदंग सरस नाचत सुधंग'** वहाँ नृत्य हो रहा है । **'एक ते एक संगीत की स्वामिनी ॥'** वहाँ यह नहीं पता पड़ता कि कौन-सी सखी कम गाती है और कौन अधिक गाती है ? वहाँ अनन्त कला है । एक से एक सभी सखियाँ संगीत की स्वामिनी हैं । क्यों हैं ? स्वामिनी श्रीराधारानी स्वयं सभी को सिखाती हैं, सभी कलाओं का दान करती हैं । वस्तुतः उन्हीं की कृपा से कला का ज्ञान होता है । मेहनत से कला का ज्ञान नहीं होता, यह तो ईश दत्त गुण है । हर चीज भगवान् की दी हुई है । इसीलिए जब लाड़लीजी ने कृपा किया है तो रास में सभी संगीत की स्वामिनियाँ हैं । **'राग रागिनी जमी विपिन बरसत अमी ।'** उसी समय श्यामसुन्दर ने भामिनी के रूप से वंशी बजाई । ऐसा लिखा है कि कभी श्यामसुन्दर श्रीजी को श्यामसुन्दर बना देते हैं तो कभी श्रीजी श्यामसुन्दर को श्रीजी बना देती हैं । श्रीराधासुधानिधि के श्लोक १७० में उल्लेख है – अहो विनिमयन् नवं किमपि नीलपीतं पटं मिथो मिलितमद्भुतं जयति पीतनीलं महः ।

निकुंज में राधा माधव एक दूसरे से अपने वस्त्रों का विनिमय (अदला-बदली) करते हैं । श्रीजी श्यामसुन्दर से कहती हैं कि तुम मेरी साड़ी पहन लो और श्यामसुन्दर श्रीजी से कहते हैं कि आप मेरा झामा पहन लो, पटका पहनो । यह भी एक लीला है । ऐसा नहीं कि ऐसे ही अर्थ किया जा रहा है । 'विचित्ररतिविक्रमं दधदनुक्रमाद् आकुलम्' ऐसी वहाँ प्रेम की परम्परा है जैसे श्रीजी एक जगह कहती हैं – **'श्याम तेरी बाँसुरी नेक बजाऊँ ।'** श्रीजी श्यामसुन्दर से कहती हैं कि आप राधिका बनो और मैं कृष्ण बनती हूँ । ये प्रेम की लीला है । श्रीजी श्यामसुन्दर से बोलीं कि तुम जैसी वंशी बजाते हो, मैं उससे कम नहीं बजाऊँगी । **'जो तुम तान भरो मुरली में, सोइ-सोइ गाय सुनाऊँ । हमरे भूषण तुमही पहरो, मैं तुम्हरे सब पाऊँ ।'** श्रीजी श्यामसुन्दर को अपने भूषण पहनाती हैं और कहती हैं कि देखो, यह नथ है, यह शीशफूल है, यह कौंधनी है; यह एक प्रेम की लीला है । 'हमरी बिंदिया तुमही लगाओ, मैं सिर मुकुट धराऊँ ।' मैं मोर मुकुट पहनती हूँ । श्रीजी ने कहा कि जब तुम राधिका बन जाओ तो मैं उस समय दान लेने आऊँगी । **'तुम दधि बेचन जाओ वृन्दावन, मैं मग रोकन आऊँ । तुम्हरे सिर पर दधि की मटुकिया, मैं निज दान चुकाऊँ ।'** श्रीजी श्यामसुन्दर से कहती हैं कि फिर तुम मान करना । श्रीजी सिखाती हैं कि तुम ऐसे मान करके बैठना । **'मानिनी बन तुम मान करो जब, मैं गहि चरण मनाऊँ । सूर श्याम तुम बनो राधिका, मैं नन्दलाल कहाऊँ ॥'** यह प्रेम की एक लीला है और उधर रास लीला में जब

सभी सखियों ने राग-रागिनी शुरू की । **'राग रागिनी जमी विपिन बरसत अमी, मत्त मुरलिका रमी अधर अभिरामिनी ।'** सखी रूप से श्यामसुन्दर खड़े हैं और वंशी बजा रहे हैं । उसको सुनकर राधारानी गाती हैं – **लागु कट्टर उरप सप्त सुर सों सुलभ, लेति सुन्दर सुघर राधिका नामिनी ॥**

श्रीराधाबाबा के संस्मरण

आविर्भाव-तिथि - पंडित श्रीमहीपालजीमिश्र की परम पुण्यमयी सौभाग्यशालिनी धर्मपत्नी पूज्या अधिकारिणी देवी की कोखसे १६ जनवरी, सन् १९१३ (वि. सं.१९६९ पौष शुक्ल ९) गुरुवार के दिन एक शिशु का फखरपुर ग्राममें जन्म हुआ, वही भविष्यमें 'श्रीराधाबाबा' के नाम से विख्यात हुआ। आश्चर्य और आनन्द की बात यह है कि जन्म के समय माँ को प्रसव वेदना नगण्य रूप में हुई । मेष राशि में जन्म होने के कारण नवजात शिशु का नाम रखा गया 'लालमणि' किन्तु प्रचलित नाम हुआ 'चक्रधर मिश्र' । चक्रधर कुल छः भाई-बहन थे । तीन बड़े भाइयों के नाम थे श्रीतपस्वीमिश्र, श्रीवासुदेव मिश्र और श्रीतारादत्तमिश्र और दो बड़ी बहिनों के नाम थे सोहागमणि देवी और जगतारिणी देवी । 'चक्रधर' अपनी माँ की अन्तिम सन्तान थे । बहुत बड़ी आयु में माँ ने उन्हें जन्म दिया । सबसे छोटा होने के कारण उन्हें प्यार भी बहुत मिला ।

स्वप्न में पथ-प्रदर्शक संत के दर्शन

गाँव में एक जगह एक नाटक-मण्डली आयी और मण्डली के लोग अभिनय-गायन-वादन कर रहे थे । उस कार्यक्रम में एक महिला ने भी भाग लिया । उसका सौन्दर्य तो साधारण स्तर का था, परन्तु कण्ठ बड़ा मधुर था तथा अभिनय भी बड़ा स्वाभाविक था । चक्रधर की सेवा-भावना उस महिला की ओर आकृष्ट हुई । वह आकृष्ट हुआ उसकी कला के कारण । उस महिला के गायन की सुन्दरता और अभिनय की स्वाभाविकता सराहनीय थी । कार्यक्रम के बाद चक्रधर ने उसके बारे में जानकारी प्राप्त करनी चाही, यह जानकारी इसलिये कि जो इतनी गुणी है, उस गुण का सम्मान करने के लिये यदि उसकी कोई सेवा उसके द्वारा बन जाए तो उत्तम ही है । पूछताछ करने पर पता चला कि उसके जीवन का स्तर निम्न ही है। थियेटर कम्पनी या नाटक मण्डली में जो काम करते हैं, उनके शील और चरित्र के आगे प्राय: प्रश्नवाचक चिह्न बना रहता है । चक्रधर के मन में आया कि वह ऐसा निन्दनीय जीवन भला क्यों व्यतीत कर रही है । यदि उसका जीवन सात्त्विक और संयमित हो तो कितना अच्छा होता । चक्रधर ने मन-ही-मन सोचा कि उस महिला के कल्याण के लिये मेरे द्वारा कुछ किया जाना चाहिए । जिस दिन चक्रधर ने ऐसा सोचा, उसी दिन रात्रि में उन्होंने एक स्वप्न देखा । उन्होंने स्वप्न में देखा कि उसके सामने एक अति वृद्ध संत आकर खड़े हो गये हैं । उनकी दाढ़ी बहुत लम्बी है, शीश के समस्त केश पूर्णतः श्वेत हैं । मुखमण्डल पर दिव्य कान्ति है । उन तेजोमय संत ने चक्रधर से कहा – बेटा ! महिला के उद्धार की बात मन से निकाल दो। तुम्हारे लिये अभी यही उचित है कि तुम अपने पथ पर चलते रहो । सुधारादि का कार्य शुभ है, पर अभी तुम इधर-उधर मत देखो ! यह कार्य उनका है, जो मंजिल पर पहुँच चुके हैं । अभी तो तुम अपनी दृष्टि अपने लक्ष्य पर टिकाये रखो । इधर-उधर देखने से अटकने-भटकने का भय है ।

इतना कहकर वे संत अदृश्य हो गये । उसी समय चक्रधर की नींद खुल गयी । अब प्रभात होनेवाला था । प्रातःकालीन स्वप्न में उन तेजोमय संत ने जो निर्देश दिया, उसको चक्रधर ने अपने लिये परम कल्याणमय माना और इसके बाद वह सेवा-भावना से विरत हो गया ।

सुमधुर संकीर्तन का आकर्षण

प्रतिपदासे पहले बीत गयी थी आश्विन शुक्ल पूर्णिमा । यह थी ३० अक्टूबर, सन् १९३६ को शारदीय पूर्णिमा, रास-पूर्णिमावाली तिथि । ब्रह्म-विचार-गत और ब्रह्म-चिन्तन-रत बाबा (राधाबाबा) को रास-पूर्णिमासे भला क्या प्रयोजन ?

जिन बाबा के लिये श्रीमद्भागवतपुराण का रास-पञ्चाध्यायी-अंश सदैव आलोचना का विषय रहा और जिन बाबाके लिये सगुण-साकार-तत्त्व और साकारोपासना सर्वदा ही उपहासास्पद बनी रही, ऐसे वे कट्टर वेदान्ती बाबा अपनी कुटिया में आसन पर बैठे हुए ब्रह्म-तत्त्वके चिन्तन में लीन थे । जब ठीक मध्य-रात्रिकी वेला उपस्थित हुई, तभी बाबा (राधाबाबा) को सुनायी पड़ा – **हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥**

महामंत्रकी यह स्वर-लहरी बड़ी मनोहर, बड़ी मधुर, बड़ी सुरीली, बड़ी आकर्षक थी । यह पता नहीं कि वह स्वर-लहरी किस दिशा से आ रही थी, परन्तु वह थी बड़ी ही मन-मोहिनी । उस सुललित-सुमधुर नाम-गायन की ओर बाबा का मन आकृष्ट हो गया । उस गायन के साथ-साथ बाबा भी गायन करने लग गये । बाबा का कण्ठ भी बड़ा मधुर था । बाबा के द्वारा गायन तो धीरे-धीरे हो रहा था, पर इसी के साथ उनके नेत्रों से अश्रु के बिन्दु टपकने लगे और फिर उन टपकते बिन्दुओं ने कपोलों पर प्रवाह का रूप धारण कर लिया । यह भावपूर्ण स्थिति लगभग पन्द्रह मिनट तक रही, लेकिन इस स्थितिका प्रभाव न जाने कितनी देर तक बना रहा । बाबाके लिये यह एक विचित्र और नवीन अनुभव था ।

दिव्य बालिका का नृत्य

राधा-नाम संकीर्तन का एक प्रसंग है । प्रत्येक रात्रि में नाम-संकीर्तन हुआ करता था । संकीर्तन केवल ‘राधा’ नाम का होता था । बाबा (राधाबाबा) स्वयं संकीर्तन में खड़े होते थे तथा नेतृत्व करते थे । बाबा के हाथ में घंटा रहा करता था, एक हाथ में घंटा और दूसरे हाथ में लकड़ी की मोगरी । बाबा मोगरी से घंटा बजाते जाते थे और चक्राकार घूमते जाते थे । बाबा के बोल चुकने के बाद साथ के सब लोग ‘राधे राधे राधे राधे’ कीर्तन करते जाते थे । कभी-कभी कीर्तन इतना अधिक जमता था कि सारी रात ही कीर्तन में निकल जाया करती थी । कीर्तन करते समय जब बाबा ‘राधा’ नाम को उच्च स्वर से बोलते थे, तब प्रायः भावाधिक्य में उनकी आँखें मुँद जाया करती थीं । ऐसी स्थिति में तीन-चार व्यक्ति अपने हाथ का घेरा बनाकर बाबा को घेरे के भीतर ले लिया करते थे । जैसे-जैसे बाबा घूमते, वैसे-वैसे ये लोग भी घूमते रहते थे । घेरे में ले लेने का प्रयोजन इतना ही था कि बाबा कहीं गिर न जायें, कहीं किसी से टकरा न जायें अथवा कोई व्यक्ति बाबा पर गिर न जाय । एक दिन एक मैया ने एक विचित्र बात देखी । आठ वर्ष की एक बड़ी सुन्दर बालिका बाबा के पीछे-पीछे चल रही है तथा कीर्तन कर रही है । कीर्तन के भावावेश में बाबा जिस प्रकार तथा जिस ओर अपनी गर्दन झुकाते अथवा लटकाते हैं, उसी प्रकार वह बालिका भी अपनी गर्दन झुकाती-लटकाती है । मैया को एक बात की बड़ी चिन्ता थी कि कहीं यह बालिका दबकर कुचल न जाय । कीर्तन करने वालों की भीड़ है । लोगों को इतना होश ही नहीं कि उस बालिका का ख्याल रख सकें । सभी लोग अपनी-अपनी मस्ती में उच्च स्वर से कीर्तन कर रहे हैं । उन्हें भला क्या ध्यान कि कौन आगे है, कौन पीछे है, कौन बगल में है ? बाबा का उत्साह और उल्लास सब में संक्रमित होकर सबको कीर्तन में बावला बना रहा है । उन उमंग भरे बावलों की झूमती हुई भीड़ में कहीं यह बालिका दब न जाय ! लोग तो कीर्तन में मस्त हो रहे थे, पर वह मैया तो उस बालिका की चिन्ता में ही मरी जा रही थी । उसका यह भी साहस नहीं था कि आगे बढ़कर बालिका की रक्षा का कोई उपाय करे । कहीं मुझसे बाबा का स्पर्श हो गया तो बाबा के लिये चौबीस घंटे का उपवास हो जायेगा और तब एक नयी भीषण समस्या खड़ी हो जायेगी । अस्तु, मैया की भावनाएँ तो विकल थीं, पर कोई उपाय दिखलायी नहीं दे रहा था । मैया अपनी मानसिक उथल-पुथल में उलझी हुई थी, पर कीर्तन का प्रवाह बहता ही रहा । आज कीर्तन का विराम जल्दी हो गया । कीर्तन के विराम हो ते ही मैया उस बालिका के पास दौड़ी, जिससे उसकी रक्षा की व्यवस्था और उसकी थकावट का निवारण कर सके, लेकिन वह बालिका अब कहाँ गयी ? बहुत खोजा, पर वह बालिका मिली नहीं । अभी तो यहाँ थी और अभी-अभी कहाँ चली गयी ? जल्दी ही वह मैया समझ गयी, वह कोई इस लोक की बालिका थोड़े ही थी । मैया ने अपना सौभाग्य माना कि राधानाम-संकीर्तन के मध्य उस दिव्य बालिका का दर्शन मिला । इस प्रकारके अद्भुत प्रसंग बाबा के जीवन में कई बार घटित हुए हैं ।

परम पावनकारी 'श्रीब्रजभूमि की रज'

अपने परम आत्मीयजनों को प्रेरित करके श्रीराधाबाबा ने ब्रज मण्डल के सभी मुख्य स्थानों की पावनरज का संग्रह करवाया था । संग्रह की प्रक्रिया को देखकर बड़ा विस्मय होता है कि कितनी गहरी श्रद्धा से यह कार्य किया गया है । राधाबाबा ने सन् १९५६ में काष्ठ मौन व्रत लिया था । काष्ठ मौन व्रत लेने के पूर्व तक प्रतिदिन बाबा इस ब्रजरज का सेवन किया करते थे । काष्ठ मौन की घोर अन्तर्मुखता में इसका सेवन छूट गया । इसमें ब्रजभूमि के असंख्य स्थानों की रज सम्मिश्रित है । जिन-जिन स्थानों से रज ली गयी है, उसका विवरण बाबा ने लिखवाया है । हस्तलिखित विवरण की नकल नीचे दी जा रही है –

१. ब्रज-चौरासी कोस की यात्रा के समस्त मार्ग की रज । चौरासी कोस का ब्रजमण्डल श्रीगोलोक की ही भूमि है, अतएव अलौकिक (दिव्य) है । ब्रजयात्रा, जो चौरासी कोस की यात्रा या वनयात्रा भी कहलाती है, करने से संसार के सब तीर्थों की यात्रा हो जाती है, क्योंकि समस्त तीर्थ यहाँ ब्रज रज का आश्रय लेकर निवास करते हैं, जैसे श्रीबदरीनारायणजी, रामेश्वरजी इत्यादि । कई वर्ष पहले गोस्वामी श्री १०८ ब्रज रत्नलालजीमहाराज ने ब्रजयात्रा की, जो ४९ दिनोंमें पूर्ण हुई थी । इस यात्रा में यात्रियों को लगभग ३४० मील चलना पड़ा था । इस मार्ग की रज मिनट-मिनटके अन्तर पर बराबर ली गयी है ।

२. ब्रजयात्रा में जो-जो सरोवर (कुण्ड) आये, उनकी गीली (यदि किसी में जल नहीं था तो उसकी सूखी) रज । कम-से-कम पाँच-सात कुण्ड नित्य आते थे । समग्र ब्रज में ये कुण्ड हैं और शास्त्रों में इनका बहुत ही महत्त्व बतलाया गया है, जैसे - राधाकुण्ड, कृष्णकुण्ड, प्रेमसरोवर, क्षीरसागर, वृषभानुसर इत्यादि ।

३. ब्रजयात्रा में जितने देव-मन्दिर आये, कम-से-कम पाँच-सात नित्य आते थे, उन स्थलों की रज ।

४. मन्दिरों में जहाँ-जहाँ श्रीतुलसीजी के दर्शन हुए, वहाँ से ली गयी उनके मूल की रज ।

५. यात्रा में जितनी गंगाएँ हैं, उनकी गीली रज, जैसे - मानसीगंगा, कृष्णगंगा, पाण्डवगंगा, अलकनन्दा गंगा, चरणगंगा इत्यादि ।

६. ब्रज-चौरासी-कोस में श्रीयमुनाजी की विभिन्न सैकड़ों स्थानों से ली गयी गीली रज ।

७. ब्रजयात्रा में जहाँ-जहाँ श्रीराधाकृष्ण, श्रीदाऊजी आदिके चरण-चिह्न और अन्य कई प्रकारके दर्शनीय चिह्न आये, वहाँ की रज, जैसे - चरणपहाड़ी, व्योमासुर की गुफा, भोजन-थाली इत्यादि ।

८. श्रीलीलापुरुषोत्तम की बहुत-सी लीला-स्थली की रज । ब्रज में श्रीनटनागर के अनेक लीला-विहार-स्थल हैं, जिनमें आपने भिन्न-भिन्न मधुरतम लीलायें की हैं, जैसे - ऊखल-बंधन, मिट्टी-भक्षण, दान-लीला, मान-लीला आदि ।

९. ब्रजयात्रामें जितने वन और कदम-खंडियाँ आयीं, उनकी रज । इनमें श्रीश्यामसुन्दर ने महारास, गोचारण, आँखमिचौनी, प्रलम्बासुर बध, धेनुकासुर वध इत्यादि असंख्य लीलायें की हैं ।

१०. श्रीरसिकविहारी की लीलाओं से सम्बन्धित ब्रजयात्रा के वट, पीपल, ढाक, कदम्ब इत्यादि वृक्ष-स्थलोंसे ली हुई रज । ब्रज में अनेक महत्त्वपूर्ण और सौभाग्यशाली विटप हैं । इनके मूलकी रज, ढायाकी रज और जहाँ मिली, वहाँ पेड़ में से रज ली गयी है, जैसे - टेरकदम्ब, अक्षयवट, ऐंठाकदम्ब, संकेतवट इत्यादि ।

११. ब्रजमण्डल में बहुत से महात्माओं की तपोभूमियाँ और समाधि स्थल हैं, उनकी रज, जैसे – सूरदासजी की तपोभूमि चन्द्रसरोवर पर है और श्रीनारायणस्वामीजी की समाधि कुसुमसरोवर पर है ।

१२. ब्रजभूमि में कहीं-कहीं साक्षात्कारी साधु-महात्माओं के दर्शन हुए, उनके चरणारविन्दों की और निवास-स्थानों की रज, जैसे - महात्मा श्रीरामकृष्णदासजी वृन्दावन में । १३. श्रीरासबिहारी युगल सरकार सहचरिवृन्द सहित यात्रा की शोभा बढ़ा रहे थे, उनके चरणारविन्द की रज ।

१४. सम्पूर्ण ब्रज में महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्यजी ने और वल्लभकुल के अन्य महानुभावों ने जहाँ-जहाँ निवास किया एवं श्रीमद्भागवत की कथा की थी, वहाँ-वहाँ उनकी बैठकें बनी हुई हैं, उन सबकी रज ।

१५. श्रीहरिद्वारसे श्रीगंगाजी की जो नहर ब्रज में आयी है, उसके विभिन्न स्थानों से ली गयी गीली रज ।

१६. श्रीगिरिराज-गोवर्द्धनजी की रज; उनके श्रीविग्रह पर से अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों की और उनकी परिक्रमा करके चारों ओर से तलहटी की चौदह मील की मिनट-मिनटके अन्तर पर ली गयी रज । जतीपुरा में श्रीविग्रह पर से श्रीनाथजी महाराज के प्राकट्य स्थान की, नीचे श्रीगिरिराजजी के मुखारविन्द की और गोवर्द्धन गाँव में से उनके मन्दिर की रज ली गयी है । 'श्रीगिरिराजजी' श्रीब्रजराज के साक्षात् स्वरूप ही हैं, इसमें किंचित् भी संदेह नहीं ।

१७. श्रीवृन्दावन के सैकड़ों स्थानों की रज । घाटों की, मन्दिरों की, सरोवरों की, लीलास्थल की, महात्माओं के स्थानों की, समाधियों की, श्रीबिहारीजी का जहाँ प्राकट्य हुआ था, उस श्रीनिधिवन की, श्रीयुगलसरकार के श्रीसेवाकुञ्ज नित्य-विहारस्थलकी, श्रीयमुनाजी के विभिन्न स्थानों की और श्रीवृन्दारण्य के चारों ओर परिक्रमा करके छः मील के मार्ग की मिनट-मिनटके अन्तर पर रज ली गयी है ।

१८. श्रीमथुराजी के बहुत से स्थानों की रज । घाटों की, मन्दिरों की, सरोवरों की, कंस के टीले आदि लीला-स्थलोंकी और चारों ओर परिक्रमा करके आठ मील के मार्ग की मिनट-मिनटके अन्तर पर रज ली गयी है ।

१९. श्रीनाथजीके चरणामृत की रज । श्रीनाथद्वारे में श्रीनाथजी के स्नान के जल में कोई पवित्र रज मिलाकर चरणामृत के पेड़े बनाये जाते हैं । बहुत से भक्त इनको पानी में घोलकर नित्य चरणामृत लेते हैं । इस ब्रजरज-वटी में इन पेड़ों का भी पर्याप्त मात्रा में संयोग किया गया है ।

२०. श्रीवृन्दावन के श्रीबाँकेविहारीजी के सर्वांग में लेपन किया हुआ अक्षय तृतीया का प्रसादी चन्दन ।

२१. श्रीद्वारकाजीसे आया हुआ श्रीगोपीतलाई का गोपी चन्दन ।

उपर्युक्त २१ तत्त्वों का संयोग करके छानकर फिर इसको श्रीयमुना जल की तीन भावना (पुट) देकर 'श्रीब्रजरजवटी' तैयार की गयी है । इन श्रीब्रजरजवटी की सेवन-विधि इस प्रकार है – श्रीयमुनाजल आदि में घोलकर अथवा सूखी का - १. सर्वांगमें लेपन करना । २. तिलक-स्वरूप धारण करना । ३. प्रसाद पाना । इस रज में गोपी चन्दन, श्रीठाकुरजीका प्रसादी चन्दन अथवा ब्रज के किसी स्थानकी रज मिलाकर इसको बढ़ा लेना चाहिये, जिससे सदैव उपयोग में लायी जा सके और अन्य व्यक्तियोंके भी काम में आ सके । शास्त्रोंका एवं श्रीआचार्य-चरणोंका यह आदेश है कि श्रीब्रजरज का स्पर्श मात्र उग्रतर पाप का नाश करके अन्तरात्मा को पावन करता है । तदनन्तर श्रीप्रिया-प्रियतमके श्रीचरण-कमलोंमें अनुराग बढ़ाता है, जिस अनुराग-दृढ़तासे परे जीवन का और कोई कर्तव्य शेष नहीं रहता। यदि देहावसान-समयपर इस रज का एक कण मात्र शरीर से स्पर्श अथवा घट से प्राप्त हो जाय तो निस्संदेह श्रीभगवत्प्राप्ति हो जाती है । यथासम्भव मरणासन्न व्यक्तिको इसका महत्त्व सुना देना परमावश्यक है । बोलो श्रीव्रजेश्वरीब्रजराज की .....जय हो ।

श्रीजी का अन्तरंग-प्रेम

सन् १९६५ की ११ फरवरी के दिन मथुरा में श्रीकृष्ण जन्मभूमि पर भागवतभवन का शिलान्यास हुआ । इसी के निमित्त से बाबूजी (भाईजी) गोरखपुर से मथुरा गये थे । शिलान्यास का उत्सव बहुत विशाल रूप से मनाया गया था । तब बाबूजी मथुरा में तीन सप्ताह तक रहे । वहाँ समय-समय पर ब्रजमण्डल के अनेक महान् संतों के पास जा-जा करके उन्होंने उनके दर्शन किये । बाबूजी के साथ बाबा तो रहते ही थे । इस तीन सप्ताह की अवधि में एक बार बरसाना जाने का भी कार्यक्रम बन गया । इस दिन श्रीजी के मन्दिर में सभी भक्तों ने प्रसाद पाया । बाबूजी और बाबा मन्दिर में काफी पहले आ गये थे । मन्दिरमें आकर उन्होंने युगल सरकारके दिव्य श्रीविग्रह का दर्शन किया । दर्शन करके बाबूजी तो एक किनारे बैठ गये, पर बाबा उसी घेरे का सहारा लेकर खड़े हो गये । बाबा ने अपने शरीरका सारा भार काठके उस घेरेपर अपने दोनों हाथोंके द्वारा छोड़ रखा था और उनकी दोनों आँखें श्रीजी के विग्रह पर टिकी हुई थीं । वे घेरे के सहारे खड़े-खड़े कुछ-कुछ नहीं, बहुत बोल रहे थे । उनके अधर खूब हिल रहे थे और उनकी आवाज हमारे कानों में साफ-साफ पड़ रही थी, पर हम लोग यह नहीं समझ पा रहे थे कि वे क्या बोल रहे हैं । उनकी भाषा वे ही जानें परन्तु यह स्पष्ट लग रहा था कि वे अपनी 'किसी भाषा' में श्रीजी से वार्तालाप कर रहे हैं । इसके साथ ही बाबा द्वारा एक और चेष्टा लगातार हो रही थी । उनके दोनों हाथ तो घेरे पर टिके हुए थे, किन्तु वे रह-रह करके अपने पैर को कभी उठाते

और गिराते थे । कभी दाहिना पैर और कभी बाँया पैर उठाने-गिराने का क्रम चलता रहा । शरीर का भार तो घेरे पर था ही, किन्तु जब बाँयें पैर का घुटना मुड़ता तो बाँयी एडी बाँयें जंघे तक आ जाती और इसी प्रकार की बात दाहिने पैर के साथ थी, अर्थात् कभी दाहिनी एड़ी दाहिने जंघे तक आ जाती । यह भावमयी स्थिति लगभग पौन घंटे तक बनी रही । बाबा की इस भावमयी स्थिति की ओर बहुत लोगों का ध्यान आकृष्ट हो गया । अनेक लोग बाबा के पास, परन्तु कुछ हटकर बैठ गये और उनकी इस भावमयी स्थिति को देखते । बाबा की इस भावमयी स्थितिको देखकर भावुक दर्शकजन परम विस्मयान्वित हो रहे थे । बाबा घेरे का सहारा लिये हुए श्रीजी के समक्ष बहुत देरतक खड़े रहे। भोग का समय हो जानेपर श्री श्रीजीके मन्दिरमें पट आ गया । पटके बन्द होने के बाद भी बाबा उसी प्रकार कुछ देरतक खड़े रहे। थोड़ी देर बाद इनके लिये एक आसन घेरेसे हटकर लगाया गया और बाबूजीने बाबाको वहाँ बैठाया ।

श्रीराधासुधानिधि के परम रसिक

वैद्य श्रीलक्ष्मीनारायणजी सन् १९६५ में गीतावाटिका में बहुत दिनों तक रहे तथा प्रतिदिन डेढ़-दो घंटे श्रीराधासुधानिधि की सरस कथा बाबा को सुनाया करते थे । कई महीने तक श्रीराधारससुधा के पावन प्रवाह की रसधारा बहती रही; इस कथा के श्रवण से बाबा को श्रीराधाभावरस की परमानन्दमयी परमाद्भुत रसानुभूति हुई । २७० श्लोकों वाला यह परम रसमय दिव्य रसग्रन्थ 'श्रीराधासुधानिधि' रसिक भक्तजनों का कण्ठहार ही है ।

जीवन-लीला का संवरण

९ अक्टूबर, सन् १९९२ के दिन रात्रि के समय ही बाबा के स्वास्थ्य में गिरावट आयी । स्वास्थ्य की स्थिति के बिगड़ते ही कैंसर अस्पताल के डाक्टर सम्मान्य श्री एम. एन. शर्मा एवं डा. एल. डी. सिंह आवश्यक चिकित्सा में तुरन्त संलग्न हो गये । बाबा के यति-धर्म को ध्यान में रखते हुए चिकित्सा के रूप में सेवा-कार्य हो रहा था । हमारी सेवा तत्परता चाहे जितनी उत्कृष्ट हो, उसको सफलता का श्रेय तभी मिल पाता, जब बाबा उसको सफल बनाना चाहते । तत्परतापूर्वक चिकित्सा सेवा चल रही थी और चल रही थी 'राधा' नाम की आराधना भी कि बाबा को शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ हो, परन्तु बाबा को तो अब कुछ अन्य ही अभीष्ट था । ज्यों-ज्यों स्वास्थ्य में गिरावट आती चली गयी, त्यों-त्यों बात फैलती गयी और नगर के श्रद्धालु एवं स्नेहीजन अधिकाधिक संख्या में गीतावाटिका आने लगे बाबा के स्वास्थ्य का समाचार जानने के लिये । सभी आत्मीयजनों की आन्तरिक चाह थी कि बाबा शीघ्र स्वस्थ हो जायँ, परन्तु यह सारी शुभ भावना, यह सारी सेवा-चर्या और यह सारी संकीर्तन-आराधना तभी सफल होती, जब बाबा हमारे बीच ठहरना चाहते, परन्तु उन्होंने तो 'जाने' का संकल्प कर लिया था और हम सभी लोगों के मध्य से उन्होंने सदा के लिये विदाई ले ली १३ अक्टूबर, सन् १९९२ के प्रातः काल लगभग साढ़े आठ बजे । ब्रजभावुक 'श्रीराधाबाबा' का स्थूल देह भले ही हम सबके मध्य नहीं है लेकिन उनकी ब्रज-भावनाएँ जन-जन को सदा-सदा के लिए प्रेरणा देती रहेंगी ।

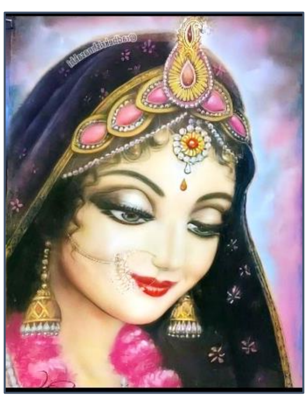

कृपा-करुणा की सिन्धु 'श्रीराधिकारानी'

बाबाश्री के राधासुधानिधि-सत्संग '२५/७/२००१' से संकलित

'कृपा, दया और करुणा' समानार्थक शब्द हैं किन्तु इनमें थोड़ा-थोड़ा अन्तर है । 'कृपा' शब्द कैसे बना है ? 'कृप्' धातु है; भगवद्गुणदर्पण में इसका अर्थ लिखा है – 'स्वसामर्थ्यानुसंधानपूर्वक प्राणी रक्षा' – यह कृपा का अर्थ है । भगवान् का जो अनन्त सामर्थ्य है, कैसा सामर्थ्य है ? 'कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्थ' जो काम करने योग्य है, जो नहीं हो सकता है वह और इससे भी अलग कोई चीज है, उस सबको जो कर सकते हैं, ये उनका सामर्थ्य है । हम लोगों की बुद्धि में करने योग्य बात ही समझ में आती है क्योंकि छोटी-सी बुद्धि है अथवा 'अकर्तुम्' यह भी समझ में आ जाता है । 'अन्यथाकर्तुम्' समझ में नहीं आता है । करने और न करने से अतिरिक्त जो अन्यथा कोई चीज है, उसको भी जो कर सकते हैं, उसको 'कृपा' कहते हैं । अपने सामर्थ्य के अनुसन्धान के साथ प्राणी-रक्षा, यह कृपा-शक्ति का एक शब्दार्थ बताया गया कि प्राणी रक्षा वही कर सकता है, जिसमें सामर्थ्य होगी । सामर्थ्य केवल भगवान् में ही है, इसलिए कृपा केवल भगवान् ही कर सकते हैं, अन्य किसी में सामर्थ्य ही नहीं है । क्यों

नहीं है क्योंकि हर व्यक्ति कालशक्ति से बँधा हुआ है और जो प्रभु हैं, ठाकुरजी व श्रीजी हैं; कालशक्ति उनकी दासी है । श्रीजी के यहाँ काल का प्रवेश ही नहीं है । रसिकों ने कहा है – **'राधामोहन के निज मन्दिर महाप्रलय नहिं जात ।'** श्रीजी के नित्य धाम में कालशक्ति का प्रवेश नहीं है । अब करुणा क्या चीज है ? कृपा और करुणा में क्या अन्तर है ? करुणा का अर्थ किया गया है – 'परदुःखहानेच्छा करुणा' जो आश्रितजन हैं, दूसरे के दुःख को हान अर्थात् नष्ट करने की इच्छा । इस तरह दूसरे के दुःख को नष्ट करने की इच्छा को 'करुणा' कहते हैं । जैसे बालक भूखा होता है तो रोता है, माँ जानती है, इसलिए उसके दुःख को हटाने के लिए दूध पिलाने लगती है; इसको 'करुणा' कहते हैं । प्राणी-रक्षा 'कृपा' है । किसी भी आपत्ति से, किसी भी संकट से रक्षा करना 'कृपा' है । करुणा क्या है ? हृदय में दूसरे के कष्ट के निवारण की जो इच्छा हुई, वह 'करुणा' है ।

जेहि जन पर ममता अति छोहू । जेहिं करुना करि कीन्ह न कोहू ॥ (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड -१३)

जिस पर करुणा करके फिर भगवान् ने कभी भी गुस्सा नहीं किया । जिस पर श्रीजी करुणा कर देती हैं, उसके ऊपर उनका कभी भी रोष नहीं होता है; इसे 'करुणा' कहते हैं । 'जेहि करुणा करि कीन्ह न कोहू ।' कभी भूल-चूक में भी उस पर कोप नहीं किया और सदा उसके कष्टों को हटाने की उनके हृदय में इच्छा होती रही, यह करुणा है । एक अन्य शब्द है – 'अनुकम्पा' । ये सब समानार्थक शब्द हैं लेकिन इनके अर्थ में बड़ा अन्तर है । अनुकम्पा भी इसी को कहते हैं, जैसे - हे नाथ ! आप अनुकम्पा कीजिये । अनुकम्पा क्या है ? संस्कृत में एक धातु है 'कम्प', अनु उपसर्ग है, अ प्रत्यय है, उसमें टाप् किया गया है । इस तरह 'अनुकम्पा' शब्द बन गया । कम्प का अर्थ है 'काँपना' । परपीड़ा से जब भगवान् की दृष्टि थोड़ा काँपती है, तो उसको 'अनुकम्पा' कहा गया है । दूसरों के कष्ट से जब हृदय काँपता है, हृदय में एक व्यथा, एक पीड़ा होती है तो उसको 'अनुकम्पा' कहा गया है । पदों में ऐसा भी वर्णन आता है – 'देखि सुदामा की दीन दशा, करुणा करके करूणानिधि रोये ।' अतः 'कम्प' का अर्थ है कि हृदय काँपा और प्रभु रोने लगे । ऐसा वर्णन बहुत जगह प्राप्त होता है कि प्रभु के नेत्रों से आँसू गिरे, जैसे - महाराज रेवत की प्रार्थना पर श्रीकृष्ण रोये थे तो उनके आँखों के आँसुओं से द्वारका में 'गोमती गंगा' प्रकट हुई; इसको अनुकम्पा कहा गया । 'अनुक्रोश' भी समानार्थक शब्द है, इसका अर्थ है – 'दया करना' । अनुक्रोश उसको कहते हैं, जैसे - कोई छोटा बच्चा किसी गड्ढे की ओर जा रहा है तो उसमें गिरने से बच्चे का अनिष्ट होगा । ऐसी स्थिति में माँ दूर से अपने बच्चे से कहती है – 'अरे ! उधर नहीं, इधर आ ।' माँ अपने बच्चे को बुलाती है – 'इधर आ ।' इसको 'अनुक्रोश' कहा गया है; ऐसा प्रह्लादजी ने कहा है । वे भगवान् से कहते हैं कि आप जब तक किसी प्राणी को अपने पास नहीं बुलायेंगे तब तक वह आपके पास नहीं आ सकता है । इसको 'अनुक्रोश' कहा गया है । भगवान् इस तरह बुलाते हैं जैसे एक माँ बुलाती है – 'आ जा, आ जा, अरे ! इधर आ; उधर नहीं जा ।' इसको 'अनुक्रोश' कहा गया है । प्रह्लादजी ने भागवत में एक स्थान पर भगवान् की स्तुति करते हुए कहा है –

त्रस्तोऽस्म्यहं कृपणवत्सल दुःसहोग्रसंसारचक्रकदनाद् ग्रसतां प्रणीतः ।
बद्धः स्वकर्मभिरुशत्तम तेऽङ्घ्रिमूलं प्रीतोऽपवर्गशरणं ह्वयसे कदा नु ॥ (श्रीभागवतजी ७/९/१६)

हे दीनों पर दया करने वाले ! मैं इस असह्य और उग्र संसार चक्र में पिसने से भयभीत हूँ । इस संसार में कितना कष्ट है, इसे हम लोग समझ नहीं पाते हैं । जैसे नदी या तालाब में कोई डूब रहा है, फिर थोड़ी देर के लिए उसे साँस लेने का मौका मिल गया, उसी प्रकार चौरासी लाख योनियों में थोड़ी देर के लिए जो यह मनुष्य शरीर मिला है, यह अथाह भवसागर में डूबते हुए प्राणी को थोड़ी देर के लिए साँस लेने के लिए मिला है, उसके बाद फिर अन्य योनियों में तो अनन्त अन्धकार है । उदाहरण के लिए पशु-पक्षियों को कोई कष्ट होता है तो ये बेचारे किसी से कुछ कह नहीं सकते हैं । हम लोगों को कोई रोग हो जाए तो अपने कष्ट को दूसरे को बता सकते हैं, अपनी चिकित्सा करवा सकते हैं, दवाई ले सकते हैं क्योंकि मनुष्य को भगवान् ने बड़ी ज्ञान-शक्ति दी है परन्तु पशु कोई रोग होने पर किसी से कुछ कह नहीं सकते, कष्ट निवारण के लिए कुछ कर नहीं सकते हैं । एक बार हमने (बाबाश्री ने) देखा कि किसी कुतिया ने पिल्ले पैदा किये तो एक

पिल्ले को पता नहीं किसी बिच्छू ने काट लिया अथवा उसको क्या कष्ट हुआ, वह बेचारा दो-तीन दिन तक चिल्लाता रहा । कुछ कह नहीं सकता, उसके कष्ट को कोई सुनने वाला नहीं । जब हमने यह देखा तो मन में विचार किया कि देखो, इसी को शास्त्रों में अविद्या का अन्धकार, चौरासी लाख योनियों का अन्धकार कहा गया है । यह पिल्ला न कुछ प्रतीकार कर सकता है, न अपने कष्ट को किसी से कह सकता है, न ही अपने रोग की कोई चिकित्सा करा सकता है । पिल्ले की माँ 'कुतिया' एक-दो बार आती थी और उसको सूँघकर चली जाती थी, इसके अलावा वह कुछ नहीं कर सकती थी क्योंकि उसमें ज्ञान-शक्ति नहीं थी । कुतिया के सूँघने से उसके बच्चे का कष्ट दूर नहीं हो सकता था । दो-दिन बाद वह पिल्ला तड़प-तड़पकर मर गया । मनुष्य-शरीर में हम लोगों पर जो भगवान् की कृपा हुई है, उसको हम जैसे प्राणी समझ नहीं सकते हैं कि भवसागर में जो हम अनन्तकाल के लिए डूब रहे थे, उसमें मनुष्य शरीर के रूप में थोड़ी देर तक साँस लेने का जो मौका मिला है, इसमें केवलमात्र श्रीहरि की शरण जाने के अतिरिक्त अन्य कोई दूसरा काम नहीं करना चाहिए । खाना-पीना, शरीर की क्रियायें आदि बहुत छोटी चीजें हैं, इनमें मनुष्य-जीवन के बहुमूल्य समय को नष्ट नहीं करना चाहिए । अस्तु, प्रह्लादजी ने कहा है – हे नाथ ! यह जो संसार की उग्र चक्की है, यह जीव को पीसती है; जैसे - किसी व्यक्ति को चक्की में डाल दो और उसको पीसो तथा उसके हाथ-पैर भी बाँध दो तो वह अपने हाथ-पाँव नहीं छुडा सकता है । उसके ऊपर कीड़े और डाल दो तो वह चक्की में पिसेगा भी तथा उसको कीड़े भी काटेंगे । वैसे ही हम लोगों को ऐसा प्रतीत होता है कि परिवार में हमारी स्त्री और बच्चे हैं किन्तु प्रह्लादजी के अनुसार ये सब कीड़े हैं, जो सारे जीवन को खाते हैं । मनुष्य की सारी आयु अपने स्त्री-बच्चों के पालन-पोषण में ही नष्ट हो जाती है । इसलिए प्रह्लादजी कहते हैं कि इस संसार की उग्र चक्की में मैं डाला गया हूँ और मेरे हाथ-पाँव अपने कर्मों के अनुसार बँधे हुए हैं । राजा हो चाहे रंक हो, सभी कर्मों की रस्सी से बँधे हुए हैं । नेपाल के एक राजा को उनके राजपरिवार के सहित उनके ही पुत्र ने गोलियों से मार दिया । कहाँ तो एक देश का राजा, उसकी सुरक्षा में कितने सिपाही तैनात होते हैं किन्तु अपने पूरे परिवार के सहित राजमहल में ही थोड़ी देर में उनको मार दिया गया । चाहे रावण बन जाओ, कंस बन जाओ किन्तु कर्म के बन्धन में प्रत्येक जीव बँधा हुआ है । कोई भी जीव स्वतन्त्र नहीं है । यही तो अज्ञान है कि हम लोग समझते हैं कि हम स्वतन्त्र हैं, जहाँ चाहे उठें-बैठें; ऐसा नहीं है । कर्म के बन्धन में हम लोग इस तरह बँधे हुए हैं कि कहो तो अभी कहीं जा रहे हैं और थोड़ी दूर चलकर गिर पड़ें, हाथ-पाँव टूट जाएँ । एक व्यक्ति कनपटी के बल ऐसा गिरा कि उसकी आँखों की ज्योति ही नष्ट हो गयी । कौन जानता है कि आगे क्या होने वाला है ? प्रह्लादजी कहते हैं – हे स्वामी ! आप मुझे कब बुलायेंगे ? जैसे एक माँ अपने बच्चे को बुलाती है कि तू यहाँ आ जा । कहाँ बुलाओगे ? अपने चरणों में जो 'अपवर्ग' शरण हैं, जो इस संसार के अनन्त कष्टों से मुक्त करने वाले हैं । भगवान् के चरणों की शरण के अतिरिक्त इस संसार में अन्य कोई ऐसा उपाय नहीं है कि हम लोग सुखी हो सकें । मनुष्य पैसा जोड़ता है, सोचता है कि पैसे से हम सुखी हो जायेंगे । विवाह करता है कि हम सुखी हो जायेंगे, सुखी होने के लिए ही सन्तान उत्पन्न करता है । विवाह करके सन्तान होने पर सोचता है कि अब हम सुखी हो जायेंगे । इसके बाद सन्तान का पालन-पोषण करता है, उसे पढ़ाता-लिखाता है । बीसों साल तक पढ़ाता है, उसके बाद चिन्ता करता है कि मेरी सन्तान का विवाह हो जाए । किसी ज़माने में अपने विवाह की सोचता था, अब सोचता है कि मेरे पुत्र-पुत्री का विवाह हो जाए । उनका भी विवाह होने के बाद नाती-पोते उत्पन्न हो जाते हैं ।

एक धनी व्यक्ति एक बार मेरे पास आये और कहने लगे कि मेरे जो पुत्र का पुत्र अर्थात् पौत्र है, उसको हम लोग बहुत ही भयभीत होकर स्कूल पढ़ने के लिए भेजते हैं क्योंकि बदमाश लोग धनी घरों के लड़कों का अपहरण कर लेते हैं । इसलिए मेरे पौत्र के साथ दो आदमी स्कूल तक जाते हैं । धनी आदमी होने के कारण उसे इतनी बड़ी सजा भोगनी पड़ती है कि अकेले कहीं बाहर नहीं जा सकता । ये सब क्या है ? मनुष्य सोचता है कि हम संसार में बड़े सुखी हैं परन्तु वह निरन्तर भवसागर के दलदल में फँसता चला जाता है और प्रह्लादजी कहते हैं – 'प्रीतोऽपवर्गशरणं ह्वयसे कदा नु' – आप अपने मोक्षस्वरूप चरणकमलों में मुझे कब बुलायेंगे ? जब प्रभु जीव को अपने पास बुलाते हैं – 'आ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ'

तब मायाशक्ति भागती है और तब मनुष्य भगवान् की शरण में पहुँचता है । इसको 'अनुक्रोश' कहा गया है । 'अनुक्रोश' का अर्थ है – 'बुलाना' । जीव भी रोता है । अनुक्रोश में दोनों बातें हैं । बच्चा रो रहा है तो उसकी माँ बुलाती है – 'आ ऽऽ आ ऽऽऽ !' वैसे ही जीव भी जब व्यथित होकर भगवान् से कहता है – 'हे दीनबन्धो !!' तब भगवान् रूपी माँ उसे बुलाती है – 'आ-आ-आ' ! इसको अनुक्रोश कहते हैं । इसी तरह ये जितने भी शब्द हैं, इन सबका समान अर्थ है । एक शब्द है – 'दया' । यह कैसे बनता है ? संस्कृत में 'दय्' धातु है, वह सहानुभूति अर्थ में होती है अर्थात् कोई व्यक्ति है, जो आपके सामने गाड़ी के नीचे आ गया है । आप उसको देखते हैं तो आपके हृदय में उसके प्रति जो सहानुभूति उत्पन्न होती है, उसको 'दया' कहते हैं । मन में भावना होती है कि अरे, इसको उठा दो, यह गिर गया है; इसको 'दया' कहते हैं । ये जितने भी शब्द हैं, ये समानार्थक होते हुए भी इनमें थोड़ा-थोड़ा अन्तर है । कृपा के लिए सामर्थ्य चाहिए क्योंकि भगवद्गुणदर्पण में 'कृपा' शब्द की परिभाषा है – 'सामर्थ्यानुसंधानपूर्वक प्राणी-रक्षा' इसको कृपा कहते हैं । ऐसा केवल प्रभु ही कर सकते हैं क्योंकि यह सामर्थ्य केवल उन्हीं में है, इसीलिए उनको 'कृपानाथ' कहा गया है, 'कृपालु' कहा गया है । इसी प्रकार करुणा का अर्थ बताया गया – 'परदुःखहानेच्छा' इसमें उनन् प्रत्यय कर टाप् करके कृ धातु से 'करुणा' शब्द बना है । 'परदुःखहानेच्छा' अर्थात् दूसरे के दुःख को नष्ट कौन कर सकता है, जो स्वयं दुःख रहित होगा, 'तीर्णास्तारयन्ति' – जो तर चुका है, वही दूसरे को तारेगा । जो किनारे खड़ा है, वही हाथ पकड़कर खींचेगा । उसी प्रकार दूसरे के दुःखों को कौन नष्ट कर सकता है, वही जो प्रभु है । ऐसा क्यों ? लक्ष्मीजी ने कहा है –

स वै पतिः स्यादकुतोभयः स्वयं समन्ततः पाति भयातुरं जनम् ।
स एक एवेतरथा मिथो भयं नैवात्मलाभादधि मन्यते परम् ॥ (श्रीभागवतजी ५/१८/२०)

पति तो संसार में एक ही है, जो रक्षा करता है । जो चारों ओर से रक्षा कर दे, जो कालशक्ति से रक्षा कर दे, उसको 'पति' कहते हैं । ऐसी शक्ति किसमें है ? केवल भगवान् में है । इसीलिए 'करुणा' भी केवल वही कर सकते हैं, 'कृपा' भी केवल उन्हीं पर लागू होती है । वही जीव को आवाज देकर अपने पास बुला सकते हैं । तब मायाशक्ति उनकी आवाज को सुनकर डरकर भाग जाती है । 'विलज्जमानया यस्य स्थातुमीक्षापथेऽमुया ।' जिनके सामने कालशक्ति, मायाशक्ति खड़ी नहीं हो सकती है । इसी तरह दय् धातु से 'दया' शब्द बना । 'अनुकम्पा' शब्द भी इसी तरह 'कम्प' धातु से बना है । जिन भगवान् के हृदय में इतनी कृपा है कि कृपा के कारण उनका हृदय काँपने लगता है, उनके नेत्रों से आँसू बहने लगते हैं । वे ऐसे करुणा के सागर हैं । श्रीराधारानी के लिए तो कहा गया है कि वे इतनी कृपामयी हैं कि कृपा के कारण उनकी आँखों से सदा आँसू छलछलाते रहते हैं; ऐसा रसिकों ने लिखा है । श्रीजी ऐसी कृपामयी हैं कि राधासुधानिधिकार ने उनके बारे में लिखा है – **ब्रह्मेश्वरादि सुदुरूह पदारविन्द श्रीमत्पराग परमाद्भुत वैभवायाः ।**
सर्वार्थसार रसवर्षि कृपार्द्रदृष्टेस्-तस्या नमोऽस्तु वृषभानुभुवो महिम्ने ॥

इस श्लोक में श्रीजी की करुणा का बड़ा सुन्दर वर्णन किया गया है । कोई जा रहा हो, जब कोई बड़ा आदमी किसी छोटे व्यक्ति की सहायता छोटा बनकर करता है तो इतिहास में उसका नाम हो जाता है । जैसे कि अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति जॉर्ज वाशिंगटन के जीवन की घटना है कि वे वेष बदलकर भ्रमण किया करते थे । एक बार वे जा रहे थे तो उन्होंने देखा कि किसी स्थान पर तीन मजदूर एक लट्ठे को हटा रहे थे और सेना का कमान्डर उनको कठोरता पूर्वक आदेश दे रहा था – 'इस लट्ठे को उठाओ, इसे रास्ते से हटाओ ।' तीन आदमियों से वह लट्ठा नहीं उठ रहा था ।चौथे आदमी की आवश्यकता थी । राष्ट्रपति स्वयं गये और उन्होंने स्वयं मजदूर की तरह उस बोझ को उठाने में सहयोग किया तो वह लट्ठा रास्ते से हटा दिया गया । यह देखकर उस अधिकारी ने बड़े अहंकार के साथ पूछा – तुम कौन हो ? जॉर्ज वाशिंगटन हँसने लगे और उन्होंने अपना परिचय पत्र दिखाते हुए बताया कि मैं अमेरिका का राष्ट्रपति हूँ । यह देखकर वह अधिकारी घबरा गया । उसके शरीर में पसीना आ गया । राष्ट्रपति ने उस अधिकारी से कहा कि अधिकारी का मतलब यह नहीं होता कि हम हैवान बन जाएँ । हम पहले मनुष्य हैं, उसके बाद अधिकारी हैं । मैं तुमको कोई सजा नहीं दूँगा किन्तु जब

काम में चौथे व्यक्ति की आवश्यकता है तो तुम केवल दूर खड़े होकर आदेश दे रहे हो तो इसको अधिकारी नहीं कहते, इसको शासन नहीं कहते हैं । तुम पहले मनुष्य बनो, उसके बाद अधिकारी या कमान्डर बनना ।

इसी प्रकार हमने उदाहरण दिया कि श्रीजी इतनी बड़ी हैं कि राधासुधानिधि में पहले के श्लोकों में उनका बड़प्पन दिखाया गया । सबसे बड़ी होने पर भी वे इतनी अधिक सरल और दयालु हैं कि उनकी आँखों में सदा दया के आँसू भरे रहते हैं । श्रीजी इतनी बड़ी हैं कि ब्रह्मा और शिव जैसे बड़े-बड़े देवता उनके चरणकमलों तक नहीं पहुँच सकते हैं । क्यों नहीं पहुँच सकते ? प्रश्न उठता है कि जब इतने बड़े देवगण श्रीजी के चरणों में नहीं पहुँच सकते तो फिर हम जैसे तुच्छ लोगों की क्या सामर्थ्य है ? श्रीजी के पास केवल सखी-सहचरी भाव वालों का ही प्रवेश है, जो केवल माधुर्य भाव के ही अनुगत हैं अन्यथा वहाँ तो लक्ष्मीजी का भी प्रवेश नहीं है । ऐश्वर्य का श्रीजी के राज्य में प्रवेश नहीं है । 'ब्रह्मेश्वरादि .....' आदि में अन्य समस्त देवगण, सिद्धगण आदि सब आ जाते हैं । जब ब्रह्मा-शिव ही वहाँ नहीं पहुँच सकते फिर अन्य छोटे देवताओं की क्या क्षमता ? ब्रह्मा, शिव आदि भी जिन राधारानी के चरणारविन्द को नहीं पा सकते हैं । ब्रह्मेशादि सुदुरूह पदारविन्द – सुधानिधि के इस श्लोक की पहली पंक्ति का ये अर्थ हुआ । 'श्रीमत्पराग परमाद्भुत वैभवायाः' – जैसे कमल पुष्प के भीतर पराग होता है । पराग पुष्प के उन छोटे-छोटे कणों को कहते हैं, जिनके भीतर रस रहता है । उस रस को मकरन्द कहते हैं । जैसे कमल के पराग के भीतर जो रस होता है, उसे भँवरा पीता है । हम लोग उस रस को नहीं निकाल सकते हैं । उसे तो केवल भँवरा ही जानता है, इसीलिए उसको मधुकर कहा जाता है । वह कमल के मकरन्द को, पुष्प के रस को इस तरह पी जाता है कि फूल की सुन्दरता नहीं बिगड़ती है । वह पुष्प के रस को इस प्रकार पीता है कि पता ही नहीं चलता है । उस पुष्प रस को हम लोग कभी पी ही नहीं सकते हैं । इसी प्रकार राधारानी के जो चरणकमल हैं, उनके भीतर जो पराग है, वह अद्भुत पराग है । उसको केवल कृष्ण रूपी मधुकर ही पीते हैं, अन्य कोई नहीं पी सकता है । राधासुधानिधिकार ने लिखा है – **पातं पातं पद कमलयोः कृष्णभृङ्गेण तस्याःस्मेरास्येन्दोर्मुकुलितकुचद्वन्द्वहेमारविन्दम् ।**

श्रीकृष्ण 'श्रीजी के चरणकमलों के रस' को कैसे पीते हैं ? जैसे कमल के पराग में से रस निकालना केवल भँवरा ही जानता है, उसी प्रकार राधारानी के चरणकमलों में जो दिव्य रस है, उसको श्रीकृष्ण राधारानी की आधीनता को स्वीकार करके पाते हैं । उनके चरणकमलों में बार-बार गिरकरके पाते हैं । जब श्रीकृष्ण श्रीजी के चरणकमलों में गिरते हैं तो उस समय श्रीजी मुस्कुराने लगती हैं । श्रीजी के मुखकमल में जो मधु है, उसका भी श्रीकृष्ण पान करते हैं । ऐसे मधुकर केवल श्रीकृष्ण ही हैं । इसीलिए श्रीमद्भागवत में जो भ्रमर गीत गाया गया, वह क्यों गाया गया ? उसका कारण है । अष्ट छाप के महापुरुष कवियों में भगवदीय श्रीकुम्भनदासजी के सुपुत्र श्रीचतुर्भुजदासजी का एक प्रसिद्ध पद है, जिसको जब वे गाते थे तो उसे सुनकर श्यामसुन्दर उनके पास आ जाते थे । जब चतुर्भुजदासजी गिरिराज गोवर्धन के शिखर पर बैठकर इस पद को गाते थे तो श्रीनाथ सुनते थे और आ जाते थे । **'गोवर्धनवासी साँवरे लाल तुम बिन रह्यो न जाय ।'** यह पद तो बहुत बड़ा है । इसकी एक पंक्ति बड़ी ही बेजोड़ है । भँवरा कमल का रस तो पीता ही है लेकिन जिस समय वह मालती के पुष्प पर पहुँचता है तो कमल को छोड़ देता है । भँवरे को मालती की सुगन्ध और उसका रस जितना प्यारा लगता है, उतना दुनिया का कोई भी पुष्प अच्छा नहीं लगता है । इसलिए गोपियाँ कहती हैं कि श्रीकृष्ण ऐसे भँवरे थे कि इन्होंने अनेक अवतार धारण किये, अनेक लीलायें कीं परन्तु जिस समय ब्रजलीला प्रारम्भ हुई तो ब्रज की जितनी गोपियाँ थीं, राधारानी की सहचरियां थीं, उनको पाने के बाद श्रीकृष्ण ऐसे अटक गये कि फिर कहीं नहीं गये ।

सबसे बड़ी शक्ति 'सद्भावना'

भगवान् ने गीता में कहा है कि मेरे चार प्रकार के भक्त हैं – आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु और ज्ञानी ।

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन । आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥ (श्रीगीताजी ७/१६)

जो आर्तभाव से भगवान् का भजन करता है कि मेरा कष्ट दूर हो जाए, उसको भी भगवान् ने भक्त ही माना है ।

प्रह्लादजी ने नृसिंह भगवान् से कहा कि वे जो दुःख में, कष्ट में आपकी परीक्षायें थीं, वे तो छोटी थीं, ये बड़ी परीक्षा है, जो आप मुझे ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा का लोभ दिखा रहे हैं । इस परीक्षा में मैं उत्तीर्ण नहीं हो सकता हूँ । ऐसा प्रह्लादजी ने भगवान् से स्पष्ट रूप से कह दिया कि वे जो आपकी परीक्षायें थीं कि मुझे आग में जलाया गया, समुद्र में डुबोया गया, पर्वतों से गिराया गया, उसमें तो मैं आपकी दया से पार हो गया किन्तु मैं आपसे हाथ जोड़कर कहता हूँ कि इस समय जो आप मुझे लोभ दे रहे हैं, ऐसा मत कीजिये । 'मा मां प्रलोभयोत्पत्त्याऽऽसक्तम्' – अनादिकाल से हम लोग संसार के विषयों में आसक्त हैं, केवल आज से नहीं हैं । हर योनि में जीव का यही अभ्यास रहता है । हे नृसिंह ! इन वरदानों के द्वारा आप मुझे लोभ मत दिखाइये । मैं तो संसार के विषयों से डरकर आपकी शरण में आया हूँ । मैं मुसीबतों से नहीं डरता हूँ किन्तु – 'तत्सङ्गभीतो निर्विण्णो मुमुक्षस्त्वामुपाश्रितः ।' मैं तो संसार की आसक्तियों से डरकर आपकी शरण में आया हूँ । ये भोग, ये ऐश्वर्य – इनसे मुझको डर लगता है और बाकी आग-पानी तो क्या, आपके नृसिंह रूप को देखकर भी मुझे डर नहीं लगता है । वास्तव में यदि किसी को भजन करना है, भगवान् के रास्ते पर चलना है तो संसार के विषयों की आसक्ति से डरना चाहिए, भोग-ऐश्वर्य की आसक्ति से डरना चाहिए ।

प्रह्लादजी को मारने का प्रयास गर्भ के भीतर भी किया गया था । अन्य पुराणों में ऐसा वर्णन मिलता है । दैत्य गुरु शुक्राचार्य ने गर्भ में ही प्रह्लादजी को मारने के अनेकों प्रयत्न किये थे किन्तु गर्भ में ही प्रह्लादजी को आस्था प्राप्त हो गयी थी । चतुःश्लोकी भागवत में एक बड़ा ही विचित्र श्लोक है ।

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः । अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा ॥ (श्रीभागवतजी २/९/३५)

भगवान् की भक्ति सर्वत्र और सर्वदा करनी चाहिए । सर्वत्र माने सभी स्थानों में चाहे पाताल हो, पृथ्वी हो अथवा ब्रह्माण्ड का कोई कोना हो तथा सर्वदा माने जन्म के पहले गर्भ हो, गर्भ के बाद बालक अवस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था और मृत्यु – ये पाँच अवस्थायें होती हैं । पाँचों अवस्थाओं में जो अडिग रहता है, उसी का नाम महाभागवत है । प्रह्लादजी ऐसे ही महाभागवत थे, जिन्हें गर्भ के भीतर और गर्भ से बाहर जन्म लेने के पश्चात् भी मारने के अनेकों प्रयास किये गये किन्तु वे जरा भी विचलित नहीं हुए, अपनी भक्ति में सदा अडिग बने रहे ।

प्रह्लादजी ने जन्म लेने के बाद जब से भक्ति करना प्रारम्भ किया, तभी से हिरण्यकशिपु और उसके अनुचर दैत्य लोग इसी प्रयास में लगे रहते थे कि प्रह्लाद को कैसे जान से मारा जाए । इसी प्रयास में उन्हें पहाड़ से गिराया गया, समुद्र में डाला गया, आग में जलाया गया, हाथियों से कुचलवाया गया, विष दिया गया, गुफा में बन्द किया गया, जहरीले सर्पों से कटवाया गया, गुरुपुत्र शण्ड और अमर्क के द्वारा अभिचार का प्रयोग किया गया । प्रह्लाद जी के जन्म से पाँच वर्ष की अवस्था तक बराबर हिरण्यकशिपु की अध्यक्षता में प्रह्लाद को मारने के लिए बड़ी-बड़ी योजनायें बनायी जाती रहती थीं कि अब क्या किया जाए, यह तो बच गया, अब इसे कैसे मारा जाये ? लेकिन उन सब मारने वालों के प्रति प्रह्लादजी के मन में कभी भी क्रोध या द्वेष का भाव नहीं आया । मारने वालों के प्रति भी उनका यही भाव बना रहा कि ये सब मेरे प्रभु ही हैं । इसको कहते हैं निष्किल्बिष भक्त ।

हम लोग सावधानी के साथ अपनी काममयी वृत्तियों को छोड़कर कृष्ण कथा को गावें । क्यों ? प्रह्लादजी ने यह निर्णय दिया है । उन्होंने कहा कि क्या चमत्कार है कि मेरे सामने आग भी ठण्डी हो जाती है, पहाड़ भी चूर-चूर हो जाता

है, अजगर भी मेरे सामने आकर ठण्डा पड़ जाता है, कालकूट विष मुझे पिलाया गया तो वह भी निर्विष हो गया, मुझे दस-बीस दिनों तक अँधेरी गुफाओं में बन्द किया गया जिससे कि मैं

घुट-घुटकर मर जाऊँ किन्तु मुझे कुछ नहीं होता, इसका कारण क्या है ? प्रह्लादजी ने इसका कारण बताया है, इसको ध्यान से समझिये । कथा कहने और सुनने का क्या ढंग होना चाहिए ? कथा सुनने और कीर्तन करने का समन्वय प्रह्लाद जी ने भागवत में बताया है । बड़ा ही सुन्दर और समन्वयात्मक श्लोक है ।

सोऽहं प्रियस्य सुहृदः परदेवताया लीलाकथास्तव नृसिंह विरिञ्चगीताः ।
अञ्जस्तितर्म्यनुगृणन्गुणविप्रमुक्तो दुर्गाणि ते पदयुगालयहंससङ्गः ॥ (श्रीभागवतजी ७/९/१८)

प्रह्लादजी कहते हैं कि यदि तुमको चमत्कार देखना है तो इस तरह से भजन करो । कैसा भजन ? 'सोऽहं प्रियस्य सुहृदः' – जो प्रभु सबके सुहृद हैं, सबके हितैषी हैं, 'परदेवता' – काल के भी काल हैं, उनकी लीलाओं को, कथाओं को मैं गाता हूँ, जिनको ब्रह्माजी भी गाते हैं । मैं कैसे गाता हूँ ? 'गुणविप्रमुक्तो' – मैं राग-द्वेष छोड़कर गाता हूँ । इस कथन का आशय यह है कि यदि राग-द्वेष को छोड़कर भजन करोगे तो 'अञ्जस्तितर्म्य' – अपने आप ही तुम पार चले जाओगे – 'दुर्गाणि ते' – बड़ी-बड़ी बाधायें चाहे अजगर हों, साक्षात् मृत्यु को भी तुम आसानी से पार कर जाओगे । यह प्रह्लादजी का अनुभव है । यह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण श्लोक है । घोर कष्ट भी आएगा, मौत भी तुम्हारे सामने आएगी तो आराम से चली जायेगी यदि तुम इस तरह से कथा सुनते हो, इस तरह से कृष्ण कीर्तन करते हो । 'अञ्जस्तितर्म्यनुगृणन्गुणविप्रमुक्तो' – 'गुणविप्रमुक्तो' का अर्थ है कि राग-द्वेष को छोड़कर कथा सुनो, राग-द्वेष को छोड़कर कीर्तन करो, राग-द्वेष को छोड़कर भजन करो, राग-द्वेष को छोड़कर माला जपो । ऐसा न हो कि हम इससे चिढ़ रहे हैं, वह उससे चिढ़ रहा है, सम्प्रदायों में एक सम्प्रदाय वाला दूसरे सम्प्रदाय के आचार्य की निन्दा करता है, एक गुरु दूसरे गुरु की निन्दा करता है, एक सन्त दूसरे सन्त से चिढ़ता है । ये जितनी भी हमारे समाज की विकृतियाँ हैं, ये कथा-कीर्तन-भजन का चमत्कार नहीं होने देती हैं । यह प्रह्लादजी का वचन है । 'गुणविप्रमुक्तो' का अर्थ है कि जहाँ तुम्हारा विषयों से राग है, उसे हटा लो, जहाँ से द्वेष है, उसे हटा लो । 'दुर्गाणि' – उसके बाद काल की हिम्मत नहीं है, संसार की कोई भी मुसीबत तुम्हारे सामने खड़ी नहीं हो सकती है । काल भी नहीं खड़ा हो सकता है । हिरण्यकशिपु के वंश में प्रह्लादजी भक्त हो गये लेकिन वह वंश अभी तक असुर वंश के नाम से ही जाना जाता है । प्रह्लादजी ने उस वंश के असुर बालकों से कहा कि देखो, मेरे पास एक ऐसा यन्त्र है कि उसके प्रभाव से असुरों का सारा कुचक्र असफल हो जाता है । इसका अभिप्राय यह है कि यदि हमारे अन्दर भाव शक्ति है तो उसके प्रभाव से हजारों-लाखों शत्रु, हजारों-लाखों उनकी शक्तियाँ एक भावशक्ति के आगे पराजित हो जायेंगी । भाव शक्ति इतनी बड़ी होती है । प्रह्लादजी ने अपने पिता हिरण्यकशिपु से उसके हित के लिए स्पष्ट रूप से कहा कि पिताजी ! आपने जो दीर्घकाल तक तपस्या की, वह भजन नहीं था । प्रह्लादजी ने अपने पिता से बहुत ही कठोर बात कह दी क्योंकि हिरण्यकशिपु ने तो बहुत ही भीषण तप किया था परन्तु प्रह्लादजी ने उसको भजन ही नहीं माना । कितने आश्चर्य की बात है ! प्रह्लादजी ने इस बात को अपने पिता से कह और दिया । इससे पता चलता है कि भक्त कितना निर्भय होता है । सच कहने में कितना निर्भय होता है । प्रह्लाद ने कहा कि पिताजी ! आपने असली पूजा तो की ही नहीं है । आप हजारों-लाखों वर्षों तक कठोर तपस्या करके भी असुर ही बने रहे क्योंकि आपकी उपासना सही नहीं थी । 'जह्यासुरं भावम्' – आपके अन्दर जो आसुरी भाव है, पहले आप उस आसुरी भाव को छोड़िये, उसके बाद भजन करने चलिए । आसुरी भाव को छोड़े बिना लाखों वर्षों तक भजन करते रहो, उससे क्या लाभ है ? महत् समर्हणम् – सबसे बड़ी पूजा, सबसे बड़ी उपासना यही है कि हम आसुरी भाव को छोड़कर ईश्वर प्राप्ति के इस मार्ग पर चलें । आसुरी भाव को छोड़कर भगवान् के दो नाम भी ले लो, वही पर्याप्त है । **'जह्यासुरं भावमिमं त्वमात्मनः समं मनो धत्स्व न सन्ति विद्विषः ।'**

– आसुरी भाव क्या है ? सर्वत्र विषम बुद्धि रखना ही आसुरी भाव है । सर्वत्र समान बुद्धि कर लो । कोई विद्वेषी है ही नहीं, कोई शत्रु है ही नहीं । पिताजी ! यदि कोई शत्रु है तो आपका मन ही शत्रु है । वास्तव में हमारा मन ही हमारा सबसे बड़ा शत्रु है, बाकी दुनिया में कोई भी शत्रु नहीं है । **'ऋतेऽजितादात्मन उत्पथस्थितात्तद्धि ह्यनन्तस्य महत् समर्हणम् ॥'** यह मन ही उत्पथ (गलत रास्ते) पर जा रहा है । कहीं राग कर लेता है, कहीं द्वेष करता है और फिर राग-द्वेष मन को विषम कर देते हैं । मन के अतिरिक्त अन्य कोई शत्रु है ही नहीं । जिसने इस बात को समझ लिया, उसकी सबसे बड़ी पूजा वही हो गयी, सबसे बड़ी उपासना वही हो गयी, जो श्यामसुन्दर को, अपने इष्ट को एकदम सामने ला देती है ।

प्रह्लादजी कहते हैं – **परावरेषु भूतेषु ब्रह्मान्तस्थावरादिषु । भौतिकेषु विकारेषु भूतेष्वथ महत्सु च ॥ गुणेषु गुणसाम्ये च गुणव्यतिकरे तथा । एक एव परो ह्यात्मा भगवानीश्वरोऽव्ययः ॥** (श्रीभागवतजी ७/६/२०, २१)

इस ब्रह्माण्ड में ब्रह्मा से लेकर चींटी तक छोटे-बड़े जितने भी प्राणी हैं अथवा ये जो पञ्चमहाभूत हैं – आग, पानी, आकाश, हवा और पृथ्वी तथा इनके बने हुए विकार माने हथियारों में, तीनों गुणों में, प्रलय में, सृष्टि में एक ही कृष्ण हैं, अन्य कोई दूसरा नहीं है । यह भाव यदि मनुष्य के हृदय में आ जाए तो सारा संसार जल जाए, प्रलय हो जाए, तुम नहीं मरोगे ।

राग-द्वेष से रहित संकीर्तन का चमत्कार

प्रह्लादजी जब कीर्तन करते थे तो उनके साथ असुरों के जितने भी बच्चे थे, वे भी कीर्तन करते थे । जब एक भक्त होता है तो वह अपने संग से बहुतों को भक्त बना देता है । इसी प्रकार एक शराबी होगा तो वह बहुत से लोगों को शराब पीना सिखा देगा । बीड़ी पीने वाला बहुत से लोगों को बीड़ी पीना सिखा देगा । इसी प्रकार एक कामी व्यक्ति बहुत से लोगों को काम विकार की गन्दगी सिखा देता है । जितने भी असुर बालक प्रह्लाद के पास आये, उन्होंने पूछा – 'प्रह्लाद ! एक बात बता, तेरे अन्दर क्या विशेषता है, कौन सा मन्त्र है, कौन सी युक्ति है कि तेरे पास आते ही बड़े-बड़े दिग्गजों के दाँत टूट गये ?' प्रह्लादजी ने कहा – **दन्ता गजानां कुलिशाग्रनिष्ठुराः शीर्णा यदेते न बलं ममैतत् ।** मित्रो ! दिग्गजों के दाँत जो चूर-चूर हो गये, इसमें मेरी कोई शक्ति नहीं है न मेरी कोई प्रशंसा है ।

असुर बालकों ने पूछा - 'दिग्गजों के दाँत वज्र की तरह कठोर थे, वे तुझे मारने के लिए आये, तेरा तो बाल भी बाँका नहीं वे कर सके, इसके विपरीत उनके ही इतने शक्तिशाली दाँत चूर्ण कैसे बन गये ?'

प्रह्लादजी ने कहा – **महाविपत्तापविनाशनोऽयं जनार्दनानुस्मरणानुभावः ॥** (श्रीविष्णुपुराण १/१७/४४)

जनार्दन भगवान् का स्मरण, उनकी याद करने से ही बड़ी से बड़ी विपत्तियों का विनाश हो जाता है ।

हम लोग दुःख की याद तो करते हैं किन्तु भगवान् की याद नहीं करते हैं । जिसके ऊपर दुःख आता है, वह मुख से तो कहता है – हा राम ! हा राम ! परन्तु मन से वह अपने दुःख की याद करता है । अगर भगवान् की याद करे तो दुःख समाप्त हो जायेगा । निश्चित समझ लो कि समस्त संकटों को दूर करने का प्रह्लादजी यही एकमात्र चमत्कार बता रहे हैं ।

गौ–सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का

Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN,BARSANA, MATHURABank – Axis Bank Ltd , A/C – 915010000494364

IFSC – UTIB0001058 BRANCH – KOSI KALAN, MOB. NO. –9927916699

प्रह्लाद ने परास्त किया हिरण्यकशिपु को, किस शक्ति से परास्त किया था ? उसको विचार करो । वह शक्ति कहीं चली नहीं गयी है और उस कार्य को तुम कर सकते हो । हिरण्यकशिपु ने कहा था – मैं जब भृकुटि टेढ़ी करता हूँ तो ब्रह्मा-शंकर भी काँपते हैं, ईश्वर समेत तीनों लोक काँपते हैं । मेरी भौंह टेढ़ी होने पर ईश्वर भी काँपता है ।

क्रुद्धस्य यस्य कम्पन्ते त्रयो लोकाः सहेश्वराः ।
तस्य मेऽभीतवन्मूढ शासनं किम्बलोऽत्यगाः ॥ (श्रीभागवतजी ७/८/७)

हिरण्यकशिपु गलत नहीं कह रहा है । स्वयं वामन भगवान् ने कहा है कि जब हिरण्यकशिपु दिग्विजय करने के लिए गया था तो स्वयं विष्णु भगवान् भी छिप गये थे । इसीलिए हिरण्यकशिपु कहता है कि ईश्वर भी मेरे भय से काँपता है और उस मेरे सामने एक लड़का खड़ा है और निर्भीक खड़ा हुआ है, मेरे शासन को तोड़ रहा है तथा भगवन्नाम ले रहा है । क्या शक्ति, क्या बल है तेरे पास ? छोटा सा बालक प्रह्लाद घबराया नहीं क्योंकि सच्चा बल एक ही है और उसको हम लोग छोड़ देते हैं । आज भी यदि हम उस बल का उपयोग करें तो असम्भव कुछ नहीं है । तुम देखो हम वही बात बताएँगे जो तुम कर सकते हो ।

प्रह्लाद ने हिरण्यकशिपु से कहा – हे राजन् ! आप पूछते हैं कि मेरे पास क्या बल है ? यह पूछिए कि आपके पास किसका बल है ?

न केवलं मे भवतश्च राजन् स वै बलं बलिनां चापरेषाम् ।
परेऽवरेऽमी स्थिरजङ्गमा ये ब्रह्मादयो येन वशं प्रणीताः ॥ (श्रीभागवतजी ७/८/८)

ब्रह्मा-शिवादि भी जिसके इशारे से नाचते हैं, बल तो केवल उसी का है । क्या बल अपने पास होता है ? जीव के पास बल नहीं होता है । याद रखो, जो कहता है कि जीव के पास बल है, वह असुर है । कभी भी किसी जीव के पास बल नहीं होता है ।

हिरण्यकशिपु प्रह्लादजी को अपने पास बुलवाता है और कहता है कि जब मैं क्रोध करता हूँ तो ब्रह्मा, शिव और विष्णु आदि त्रिदेव भी भयभीत हो जाते हैं, ऐसा मैं त्रिलोकी का शासक और मेरे सामने तू एक पाँच वर्ष का बालक निर्भय खड़ा हुआ है और तूने मेरे आदेश का उल्लंघन कर दिया है ।

क्रुद्धस्य यस्य कम्पन्ते त्रयो लोकाः सहेश्वराः । तस्य मेऽभीतवन्मूढ शासनं किम्बलोऽत्यगाः ॥ (श्रीभागवतजी ७/८/९)

मैंने कहा था कि विष्णु की भक्ति मत करो, कृष्ण नाम का कीर्तन बन्द कर दो लेकिन तूने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया । प्रह्लादजी तो कीर्तन करने के साथ नृत्य भी करते थे । हिरण्यकशिपु ने देखा कि प्रह्लाद मुझसे भयभीत होना तो दूर अपितु मुझे देखकर मुस्कुरा रहा है । डर तो इसके हृदय में बिल्कुल भी है ही नहीं । मैं क्रोध कर रहा हूँ, क्रोध में भरकर इसे आँख दिखा रहा हूँ, भौंहें चढ़ा रहा हूँ किन्तु इस लड़के पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा है । तब हिरण्यकशिपु प्रह्लाद से पूछता है कि तेरे अन्दर क्या शक्ति है, क्या बल है ? प्रह्लादजी उसके उत्तर में एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात कहते हैं – 'पिताजी ! आप धोखे में हैं । आपने अपने को बलवान समझ लिया है । आप इस बात को समझिये कि बलवान किसको कहते हैं । संसार में अपने को बलवान समझने वाले सभी लोग बड़े ही कमजोर हैं ।'

दस्यून्पुरा षण्ण विजित्य लुम्पतो मन्यन्त एके स्वजिता दिशो दश । (श्रीभागवतजी ७/८/११)

प्रह्लादजी बहुत ही बढ़िया बात कहते हैं कि इस संसार में ये छः शत्रु हैं, ये छः वैरी हमारे साथ दिन-रात लगे रहते हैं । दिन में लगे रहते हैं, रात में लगे रहते हैं, सोते-जागते लगे रहते हैं । ये छः डाकू हैं पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और एक मन । आचार्यों ने कहा है कि मन के भीतर छः डाकू और बैठे हैं । दो काका, तीन मामा और एक लाला । मन के भीतर दो काका बैठे हैं, ये हैं काम और क्रोध । तीन मामा हैं – मद, मोह और मात्सर्य तथा एक लाला है लोभ । ये मन के भीतर बैठे रहते हैं और हम लोगों को बहुत प्यारे लगते हैं । प्रह्लादजी कहते हैं कि संसार में कोई भी पुरुष इन छः डाकुओं को तो जीतता नहीं है और कहता है कि हम राजा हैं, हम सबसे बड़े हैं, हम सबसे अधिक बलवान हैं, हम पहलवान हैं, हम

सबसे अधिक धनी हैं । हम जिसको चाहें उसको धूल में मिला सकते हैं । प्रह्लादजी कहते हैं कि तुम्हारे भीतर जो छः भूत बैठे हैं, ये तुमको कच्चा चबा लेंगे । तुम्हारे में क्या ताकत है ? यदि ताकत है तो इन छः वैरियों को जीतकर दिखाओ । किसी में यदि ताकत है तो पहले अपने मन को मारे । मन जीव को इस प्रकार नचाता है जैसे मदारी छडी लेकर बन्दर को नचाता है । सारे हिरण्य नगर में हल्ला मच गया कि दैत्य गुरु शुक्राचार्य के पुत्र शण्ड-अमर्क ने प्रह्लाद के ऊपर अभिचार का प्रयोग किया तो प्रह्लाद का बाल भी बाँका नहीं हुआ किन्तु दोनों गुरुपुत्र शण्ड और अमर्क की मृत्यु हो गयी । हिरण्यकशिपु को बड़ा दुःख हुआ और उसके सारे राज्य में सार्वजनिक शोक की घोषणा कर दी गयी । हिरण्यकशिपु ने सोचा कि गुरुजी लौटकर आयेंगे तो मैं उनसे उनके पुत्रों के बारे में क्या कहूँगा ? ये कैसी विकट समस्या आ गयी है ? ये लड़का कैसे मरेगा ? यह तो आफत बन गया है । उस समय बहुत से लोग जो प्रह्लाद के मित्र थे और कीर्तन करते थे, लोग उनके पास गये और उनसे कहा कि तुम लोग प्रह्लाद से पूछो कि क्या ये गुरु पुत्र जीवित हो सकते हैं ? उनके कहने पर प्रह्लाद के मित्र प्रह्लादजी के पास गये और पूछा कि क्या ये मरे हुए गुरु पुत्र फिर से जीवित हो सकते हैं ? प्रह्लाद जी ने कहा – 'हाँ-हाँ ! क्यों नहीं जीवित हो सकते हैं ?' वे मित्र बोले – 'अरे प्रह्लाद ! तुझमें तो बड़ा चमत्कार है, जिसको चाहे जीवित कर दे, जिसको चाहे मार दे ।' मित्रों ने कहा कि हमारा प्रह्लाद गुरुपुत्रों को फिर से जीवनदान दे सकता है । जबकि सच्चाई यह है कि अभिचार के द्वारा मरा हुआ प्राणी कभी जीवित होता ही नहीं है क्योंकि अभिचार में वेद मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है । जब यह समाचार फैला कि प्रह्लाद अपने गुरु पुत्रों को फिर से जीवित कर सकता है तो सारे नगर में हल्ला मचने लगा । एक तो हल्ला पहले से था कि अब प्रह्लाद के ऊपर अभिचार का प्रयोग होगा । अब प्रह्लाद किसी भी प्रकार से बच नहीं सकता है । यह आग से बच गया, पानी से बच गया, तोप से बच गया, जहर से बच गया किन्तु अब यह नहीं बचेगा । यह हल्ला था किन्तु विपरीत बात यह हुई कि जिन्होंने अभिचार किया, वे ही मृत्यु को प्राप्त हो गये । अब दूसरा हल्ला यह मचा कि प्रह्लाद कहता है कि मृतक गुरुपुत्र फिर से जीवित हो सकते हैं । जबकि अभिचार से मरा हुआ कभी नहीं जी सकता । वैसे ही सृष्टि का यह नियम है कि एक बार जिसकी मृत्यु हो गयी, वह दुबारा नहीं जीवित हो सकता है । हल्ला मचने पर नगर में सभी दैत्य-दानव-राक्षस जमा हो गये । वे लोग कहने लगे कि प्रह्लाद के मित्र कह रहे हैं कि हमारा सखा प्रह्लाद गुरु पुत्रों को जीवित कर देगा । बहुत बड़ी भीड़ जमा हो गयी । प्रह्लाद को बुलाया गया । पाँच वर्ष का छोटा सा बालक कीर्तन करते हुए वहाँ आया । वहाँ पर कुछ लोग जो प्रह्लाद से प्रेम करते थे, उन्होंने कहा – 'बेटा ! अगर तेरी सामर्थ्य है तो इन गुरु पुत्रों को जीवित कर दे । हमारे गुरु के ये पुत्र हैं और सभी जानते हैं कि ये तेरे ही कारण मरे हैं । इन्होंने तेरे लिए अभिचार का प्रयोग किया किन्तु ये तुझको पढ़ाते थे तो ये तेरे भी गुरु हैं ।' अब तो ये गुड़ भी नहीं रहे, गू बन गये और इनका शिष्य इनको जीवित करने जा रहा है । उस समय प्रह्लाद ने खड़े होकर एक बात कही – 'जितने भी मुझे मारने वाले असुर थे, इनके प्रति मेरे मन में यदि कभी भी क्रोध, द्वेष या कोई बुरा विचार न आया हो तो इस सत्य से ये गुरु पुत्र जीवित हो जाएँ ।' जैसे आपको किसी ने गाली दी तो आपको बुरा अवश्य ही लगेगा । किसी ने बीच बाजार में आपको दो झापड़ लगा दिया । वह ताकतवर है तो भले ही उससे आप कुछ नहीं बोलोगे परन्तु मन में यही सोचोगे कि यह मर जाए तो बहुत अच्छा हो लेकिन प्रह्लाद जी कहते हैं कि यदि अपने को मारने वाले सभी के प्रति मैं गुणविप्रमुक्त अर्थात् राग-द्वेष से मुक्त रहा होऊँ तो इस सत्य के प्रभाव से ये गुरुपुत्र जीवित हो जाएँ । जब प्रह्लाद जी ने यह बात कही तो उसी समय दोनों गुरु पुत्र शण्ड और अमर्क जीवित हो गये ।

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुनरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें
सेवा राशि देकर रसीद अवश्य प्राप्त करें।
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA
संपर्क 9927338666
www.maanmandir.org
आपकी सेवा राशि आयकर अधिनियम 80G/12A के अंतर्गत आयकर छूट के लिए मान्य है
रजिस्ट्रेशन नंबर AADTS716DEF2021401

वास्तविक वीरता 'गौ-भक्ति'

(एक सत्य घटना)

सबलगढ़ तहसील के फाटक पर रहीम सिपाही बैठा था । तब तक भीतर से रामसिंह सिपाही एक रोटी और उसी पर कुछ खीर रखे हुए बाहर निकला ।

रहीम – अरे रामसिंह ! यह रोटी और खीर कहाँ लिए जा रहे हो ?

रामसिंह – यह 'अग्रासन' है । रहीम – 'इसका क्या मतलब है ?' रामसिंह – हम लोग जब रोटी बनाते हैं तो पहली रोटी 'गोमाता' के लिए ही बनाते हैं । उसको 'अग्रासन' कहा जाता है । रहीम – 'तुम रोटी खा चुके ?' रामसिंह – 'पहले गोमाता को खिला दूँगा, तब कहीं मैं चौके में पैर रखूँगा ।' रहीम – 'तुम गाय को माता मानते हो ?' रामसिंह – 'माता ही नहीं, जगन्माता मानता हूँ । तुम्हारे इस्लाम धर्म में भी कहा गया है कि यह पृथ्वी गाय के सींग पर रखी है ।' रहीम – 'तुम्हारा इष्टदेव कौन है ? तुम किसकी पूजा करते हो ?' रामसिंह – 'मेरी इष्टदेवी गाय माता हैं । मैं गाय की ही पूजा करता हूँ । वैतरणी (भवसागर) को पार करने वाली नाव वही है ।' रहीम – 'आज तुम्हारी गौ-भक्ति देखी जाएगी ।' रामसिंह – 'कैसे ?' रहीम – 'तुम जानते हो कि आज ईद है ?' रामसिंह – 'जानता हूँ, फिर ?' रहीम – 'यह जानते हो कि इस समय तहसीलदार, नायब तहसीलदार, थानेदार, दीवान और कई सिपाही मुसलमान हैं ?' रामसिंह – 'यह भी जानता हूँ, फिर ?' रहीम – 'इस तहसील के अहाते में ही थाना भी है, यह मालूम है ?' रामसिंह – 'मालूम है, फिर ?' रहीम – 'तहसील और थाने के बीच में जो आँगन है, उसी में आज गोकसी (गाय की हत्या) की जायेगी ।' रामसिंह – 'किस समय ?' रहीम – 'रात के बारह बजे ।' रामसिंह – 'ग्यारह बजे से मेरा पहरा है ।' रहीम – 'तब तो तुम अपनी आँखों से, अपनी गोमाता को कटता हुआ देखोगे ।' रामसिंह – 'क्या यह बात सब अधिकारियों ने पास कर दी है कि तहसील में गाय की कुर्बानी दी जाए ।' रहीम – 'जी हाँ, ठाकुर साहब ! सभी अफसर मुसलमान हैं । इसलिए यह बात तय हो चुकी है ।' रामसिंह – 'मेरे सामने गोमाता को काटा जाए, यह बात असम्भव है रहीम ।' रहीम – 'मैं खुद अपने हाथ से गाय के गले पर छुरी चलाऊँगा ।' रामसिंह – 'लेकिन सिर पर कफ़न बाँधकर आना ।' रहीम – 'देखूँगा कि तुम क्या करते हो ?'

रात के ग्यारह बजे रामसिंह सिपाही वर्दी पहनकर और हाथ में भरी हुई बन्दूक लेकर खजाने का पहरा देने लगा । वहाँ पर बारह बन्दूकें और भी रखी थीं, पाँच गारद के सिपाहियों की और सात थाने के सिपाहियों की । सभी बन्दूकें भरी हुई थीं और दुनाली थीं । आधा घंटे बाद एक जवान और सुन्दर गाय को लेकर रहीम आया । उसने आँगन के एक खूँटे पर गाय बाँध दी और छुरी की धार देखने लगा । आँगन भर में कुर्सियाँ बिछायी गयीं । तहसीलदार, नायब तहसीलदार, थानेदार और दीवानजी आकर उन कुर्सियों पर बैठ गये । शहर के कुछ धनी, मानी मुसलमान भी आकर बैठ गये । सब लोग चौदस की संख्या में थे । सात मुसलमान सिपाही पीछे खड़े थे । गाय के काटे जाने के स्थान पर एक मौलवी ने दुआ पढ़ी । छुरी लेकर रहीम आगे बढ़ा ।

रामसिंह – 'खबरदार रहीम ! ख़बरदार !!' रहीम – 'क्या बकते हो ?'

रामसिंह – 'चने के धोखे में मिर्च मत चबा लेना ।'

रहीम – 'चुप रहो ।' रामसिंह – 'तहसीलदार साहब ! यह तहसील केवल मुसलमानों की तहसील नहीं है । इस तहसील में हिन्दू लोगों का भी साझा है ।'

तहसीलदार – 'इसका मतलब ?' रामसिंह – 'मतलब यह है कि तहसील के भीतर गाय को नहीं काटा जा सकता है ।' तहसीलदार – 'यह मेरा आदेश है ।' रामसिंह – 'आपका आदेश कोई चीज नहीं, कलक्टर का आदेश दिखाइए ।'

तहसीलदार – 'अपनी तहसील का मैं ही कलक्टर हूँ । तहसील सबलगढ़ का मैं राजा जार्ज पञ्चम हूँ, समझे ?' रामसिंह – 'चाहे आप साक्षात् खुदा ही क्यों न हो, पर मेरे सामने ऐसा अन्याय बिलकुल नहीं होगा ।'

थानेदार – 'होगा, होगा और बीच खेत होगा । हथियार रख दो और निकल जाओ तहसील से बाहर ।'

रामसिंह – 'मेरा हथियार कौन छीन सकता है ?' थानेदार – मैं ! रामसिंह – आइये ! छीनिये आकर !!

दीवान – क्या तुम्हारी आफत आ गयी है रामसिंह ! अपने अफसर से ऐसी बदतमीजी करते हो ।

रामसिंह – अफसर ? किस बेवकूफ ने इनको अफसर बनाया ? जनता का दिल दुखाना अफसर का काम नहीं है ।

थानेदार – रहीम ! अपना काम करो । इस काफिर को बकने दो ।

रहीम ने गाय के पास जाकर जैसे ही छुरा ऊँचा किया, वैसे ही रामसिंह ने दन् से गोली चला दी । रहीम उसी समय मरकर गिर पड़ा ।

थानेदार – पकड़ो ! पकड़ो !!

रामसिंह ने दूसरी गोली थानेदार की छाती पर चला दी । हाय कहकर थानेदार भी वहीं ढेर हो गया ।

तहसीलदार उठकर भागने लगा । रामसिंह ने खाली बन्दूक वहीं डाल दी और लपककर दूसरी भरी बन्दूक उठा ली ।

रामसिंह – कहाँ चले जार्ज पञ्चम ? जरा अपनी कलक्टरी की चासनी तो चख लो ।

इतना कहकर रामसिंह ने बन्दूक का घोड़ा दबाया । तहसीलदार की खोपड़ी में गोली लगी और वह वहीं ढेर हो गया । इसके बाद भगदड़ शुरू हुई लेकिन रामसिंह को विराम कहाँ ? तड़ातड़ गोली चल रही थी । निशाना अचूक था । ग्यारह आदमी जान से मारे गये । इसके बाद रामसिंह ने गोमाता के चरण छुए और रस्सी खोल दी, वह बाहर भाग गयी । तब रामसिंह ने एक गोली अपनी छाती में मार ली और मरकर वहीं गिर पड़े । सबेरा हुआ । सारा समाचार शहर में फ़ैल गया । हिन्दुओं ने रामसिंह की अरथी बनायी । एक सेठजी ने उनके शव पर पाँच सौ रुपये का दुशाला डाल दिया । चार साधुओं ने शव को कन्धा लगाया । शहर के हलवाइयों ने बताशे जमा किये । सराफों ने पैसे और रेजगारी इकठ्ठा की । माली लोगों ने फूल एकत्रित किये । जब रामसिंह की शवयात्रा चली तो आगे-आगे वही कुर्बानी वाली गाय सजाकर चलाई गयी । पीछे शंख, घंटा और घड़ियाल की मंगलमयी ध्वनि होने लगी । रास्ते में फूल, बताशे, पैसा और रेजगारी बरसायी जाने लगी । विराट जुलूस निकाला गया । कई एक सहृदय मुसलमान और ईसाई सज्जन भी साथ थे ।

श्मशान में जब रामसिंह के शव को उतारा गया तब मुहम्मद अली सौदागर ने शव पर गुलाब के फूल चढ़ाकर कहा – 'हजरत मुहम्मद साहब ने कुरान शरीफ में लिखा है कि उन जानवरों को बिल्कुल भी न मारा जाए जो मनुष्यों को सुख प्रदान करते हैं । बादशाह अकबर और बादशाह जहाँगीर ने कानून बनाकर गोहत्या बन्द कर दी थी । अफ़सोस है कि हमारे द्वेषी मुसलमान केवल हिन्दू भाइयों का दिल दुखाने के उद्देश्य से गोहत्या करते हैं । मैं उन पर लानत भेजता हूँ ।' पादरी यंग साहब ईसाई थे । उन्होंने कहा – 'सरकार अगर गोहत्या कराती होती तो विलायत में खूब गोहत्या की जाती लेकिन वहाँ इसका नामोनिशान भी नहीं है । विलायत के सभी अंग्रेज किसान गायों को पालते हैं । अफ़सोस है कि केवल चमड़े के व्यापार ने गोहत्या का बुरा काम जारी कर रखा है । भाई रामसिंह की बहादुरी की मैं भूरि-भूरि तारीफ़ करता हूँ । (यह घटना अक्षरशः सत्य है, केवल लोगों के नाम बदल दिए गये हैं ।)

ब्रजशरण

श्रीमाताजी गौशाला,

श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्री अक्षय-युगल-सरकार (अक्षय-तृतीया) पाटोत्सव की झलकियाँ

RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2024-2026 श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा 'गुप्ता प्रिन्टिंग प्रेस, खरौट गेट, कोसीकलाँ, मथुरा. उत्तरप्रदेश' से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संस्थान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित,AGRA/WPP-12/2024-2026 AT 31.12.26

श्री अक्षययुगल सरकार का पाटोत्सव मनाया गया (अक्षय-तृतीया)

रस-मंडप, गह्वरवन, बरसाना